

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में
दिवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 7196/2021

=====

प्रमोद तिवारी, पुत्र-श्री सुदामा तिवारी, निवासी क्वार्टर नं. सी/3, न्यू बीएसईबी, कॉलोनी, शास्त्री नगर, शिव मंदिर के पास, पटना, जिला-पटना, बिहार ।

... .. याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य, ऊर्जा विभाग के प्रधान सचिव के माध्यम से, बिहार सरकार, पटना।
2. प्रधान सचिव, ऊर्जा विभाग, बिहार सरकार, पटना।
3. अध्यक्ष सह प्रबंध निदेशक, बिहार राज्य विद्युत (होल्डिंग) कंपनी लिमिटेड, विद्युत भवन, बेली रोड, पटना।
4. प्रबंध निदेशक, बिहार राज्य विद्युत उत्पादन कंपनी लिमिटेड, विद्युत भवन, बेली रोड, पटना।
5. प्रबंध निदेशक, बिहार राज्य पावर ट्रांसमिशन कंपनी लिमिटेड, बेली रोड, पटना।
6. महाप्रबंधक (मानव संसाधन एवं प्रशासन), बिहार राज्य विद्युत ट्रांसमिशन कंपनी लिमिटेड, विद्युत भवन, बेली रोड, पटना।

... .. प्रतिवादी/ओं

=====

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से :

श्री वाई.वी. गिरि, वरिष्ठ अधिवक्ता

श्री प्रणव कुमार, अधिवक्ता

सुश्री सृष्टि सिंह, अधिवक्ता

प्रतिवादी संख्या 3-6 के लिए:

श्री मृगांक मौली, वरिष्ठ अधिवक्ता

श्री कुमार रवीश, अधिवक्ता

श्री संकेत, अधिवक्ता

सुश्री सिद्धि आशाना, अधिवक्ता

प्रतिवादी संख्या 1-2 के लिए:

श्री रवीश चंद्र,

एसी से एससी-6

=====

सेवा कानून---भारत का संविधान---अनुच्छेद 311---बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 2005---नियम 2 (एफ) एन डी (जे), 16---विभागीय जांच---बर्खास्तगी---याचिकाकर्ता को घोर वित्तीय अनियमितताओं, कुप्रबंधन और लापरवाही के लिए उत्तरदायी ठहराने के बाद अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित बर्खास्तगी के आदेश को चुनौती देने के लिए रिट याचिका---याचिकाकर्ता की ओर से तर्क कि याचिकाकर्ता के खिलाफ वित्तीय गबन या दुर्विनियोजन का कोई आरोप नहीं है, जिससे याचिकाकर्ता को मौद्रिक लाभ हुआ और कंपनी को इसी अनुरूप वित्तीय हानि हुई और जांच अधिकारी का निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था---आगे तर्क कि याचिकाकर्ता के खिलाफ शुरू की गई विभागीय कार्यवाही शुरू से ही व्यर्थ थी क्योंकि यह याचिकाकर्ता के नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा शुरू नहीं की गई थी---प्रतिवादियों ने यह प्रस्तुत करते हुए प्रतिवाद किया कि विभाग को आर्थिक नुकसान हुआ याचिकाकर्ता द्वारा वित्त और लेखा के संबंध में विवेक का प्रयोग न करने के कारण हुई हानि, तथा विभाग द्वारा प्राप्त कुछ राशि को ऋण के रूप में दर्शाकर लापरवाही जारी रखने के कारण हुई हानि के बारे में तर्क दिया गया है - इसके अतिरिक्त यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता निदेशक मंडल के समक्ष वैधानिक अपील दायर न करके सीसीए नियमों में निर्धारित वैधानिक प्रावधानों का उपयोग करने में विफल रहा है।

निष्कर्ष: कानून में ऐसा कुछ भी नहीं है जो नियुक्ति प्राधिकारी के अधीनस्थ प्राधिकारी को अनुशासनात्मक कार्यवाही आरंभ करने या आरोप ज्ञापन जारी करने से रोकता हो और यह निश्चित रूप से आवश्यक नहीं है कि आरोप उस प्राधिकारी द्वारा तैयार किए जाएं जो दंड देने में सक्षम हो या जांच ऐसे प्राधिकारी द्वारा की जाए---जब दंड का आदेश होल्डिंग कंपनी के सर्वोच्च प्राधिकारी के अनुमोदन से पारित किया गया था, तो अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दायर करने से कोई सार्थक उद्देश्य पूरा नहीं होगा---कदाचार और मेन्स रीया एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं हैं, जबकि मेन्स रीया में दोषपूर्ण इरादा और आपराधिक मानसिकता शामिल है, कदाचार में दोषपूर्ण इरादा साबित करना आवश्यक नहीं है---यहां तक कि उन मामलों में भी जहां आरोपित कर्मचारी पर वित्तीय अनियमितताओं के कारण गलत लाभ के लिए आरोप नहीं लगाया गया है, वहां बार-बार और घोर लापरवाही और जानबूझकर किए गए कार्य के परिणामस्वरूप कदाचार हो सकता है जिससे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम या उसकी सहायक कंपनियों को वित्तीय नुकसान हो सकता है---याचिकाकर्ता हमेशा से जानता था कि होल्डिंग कंपनी द्वारा सहायक कंपनियों को हस्तांतरित की गई राशि को इक्विटी पूंजी के रूप में माना जाना था जो आयकर विभागों के

समक्ष उसके बयान से स्पष्ट है और फिर भी उसने ऐसा नहीं किया। सीएजी के समक्ष यह दलील देना जारी रखा कि उक्त राशि इक्विटी नहीं थी, बल्कि राज्य सरकार द्वारा ऋण थी और इस कारण कंपनी को आयकर विभाग को 30.19 करोड़ रुपए की देनदारियां उठानी पड़ीं--- याचिकाकर्ता का कृत्य जानबूझकर किया गया और कंपनी के हितों के विरुद्ध था, जो कदाचार के बराबर है---अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है--- रिट खारिज की जाती है। (पैरा 16, 22, 44, 49, 50, 57, 64, 67)

(2012) 11 एससीसी 565, (1996) 2 एससीसी 145, (1997) 11 एससीसी 17, (2003) 4 एससीसी 670, एआईआर 2023 एससी 781, (1979) 2 एससीसी 286, एआईआर 1966 एससी 1051, (1967) 2 एससीआर 566, एआईआर 1963 एससी 1756पर भरोसा किया गया।

(1977) 2 एससीसी 724, (2000) 10 एससीसी 482संदर्भित।

=====

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

=====

कोरम: माननीय न्यायमूर्ति श्री बिबेक चौधरी

सीएवी निर्णय

दिनांक : 25-07-2024

प्रस्तावना

1. याचिकाकर्ता को शुरू में 10 मई, 1993 को बिहार राज्य विद्युत बोर्ड (बीएसईबी) में एक अस्थायी लेखा अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। बिहार राज्य विद्युत सुधार हस्तांतरण योजना के तहत अधिसूचना संख्या 31/08, दिनांक 30 अक्टूबर, 2012 द्वारा, बीएसईबी को एक होल्डिंग कंपनी में पुनर्गठित करने का निर्णय लिया गया और उक्त होल्डिंग कंपनी के तहत चार सहायक कंपनियों का गठन किया गया। होल्डिंग कंपनी का नाम बिहार स्टेट पावर होल्डिंग कंपनी लिमिटेड है और सहायक कंपनियां बिहार स्टेट पावर ट्रांसमिशन कंपनी लिमिटेड (बीएसपीटीसीएल), बिहार स्टेट पावर जनरल कंपनी लिमिटेड (बीएसपीजीसीएल), नॉर्थ बिहार पावर डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड (एनबीपीडीसीएल) और साउथ

बिहार पावर डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड (एसबीपीडीसीएल) हैं। पुनर्गठन के बाद, याचिकाकर्ता को बिहार स्टेट पावर होल्डिंग कंपनी लिमिटेड (बीएसपीएचसीएल) में उप महाप्रबंधक (टर्मिनल बेनिफिट्स) की भूमिका में भेज दिया गया। इसके बाद, अन्य अधिसूचना संख्या 407, दिनांक 26 अप्रैल, 2013 द्वारा, याचिकाकर्ता को बीएसपीडीसीएल में उप महाप्रबंधक (लेखा) के पद पर प्रतिनियुक्त किया गया। कि 10 जुलाई, 2017 को, उन्हें बीएसपीडीसीएल में उप महाप्रबंधक (वित्त और लेखा) के पद पर स्थानांतरित कर दिया गया।

2. दिनांक 1 मार्च, 2019 को अपनी बैठक में, बीएसपीडीसीएल के निदेशक मंडल (बीओडी) ने 31 मार्च, 2018 तक बैलेंस शीट में राज्य सरकार के ऋण के रूप में दर्ज 340.055 करोड़ रुपये को वापस करने पर मंजूरी दे दी, जिसमें 1 अप्रैल, 2018 तक 195.9595 करोड़ रुपये इक्विटी में और 144.60 करोड़ रुपये इंटर कंपनी बैलेंस में स्थानांतरित किए गए। यह भी संकल्प लिया गया कि इस संबंध में जिम्मेदार सभी कर्मियों के खिलाफ प्रशासनिक कार्रवाई की जाएगी। जब याचिकाकर्ता को बीएसपीडीसीएल में महाप्रबंधक (एफ एंड ए) के रूप में तैनात किया गया था, तो उन्हें प्रतिवादी कंपनी से पत्र प्राप्त होने से 3 दिनों के भीतर स्पष्टीकरण मांगने के लिए संचार प्राप्त हुआ, दिनांक 7 मार्च, 2019 को रुपये के लेखांकन के संबंध में। ऋण और शेयर के रूप में 340.55 करोड़ रुपये।

3. यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ता ने वर्ष 2016 और 2018 के दौरान उपरोक्त राशि के लेखांकन के संबंध में गलत जानकारी प्रदान करके वित्तीय अनियमितता करने के लिए अपने पद का उपयोग किया था। याचिकाकर्ता ने अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया, जो असंतोषजनक पाया गया। इसके बाद, 26 जून, 2019 को, एक प्रस्ताव तैयार किया गया और बीएसपीडीसीएल के महाप्रबंधक (एचआर और एडमिन) के हस्ताक्षर के तहत याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि चूंकि याचिकाकर्ता को प्रथम दृष्टया घोर कदाचार और लापरवाही का दोषी पाया गया है, इसलिए उसके खिलाफ विभागीय कार्यवाही की जानी चाहिए।

खेल की शुरुआत

4. याचिकाकर्ता को महाप्रबंधक (मानव संसाधन एवं प्रशासन), बीएसपीडीसीएल द्वारा विधिवत हस्ताक्षरित प्रभार ज्ञापन दिया गया। विभागीय प्रभार 6 शीर्षकों में नीचे दर्ज हैं:-

1. आपके द्वारा जानबूझकर अपनी सुविधानुसार 195.9595 करोड़ रुपए की राशि गलत तरीके से ऋण के रूप में प्रस्तुत की गई तथा कंपनी के

निदेशक मंडल को अपूर्ण एवं भ्रामक जानकारी देकर वित्तीय अनियमितता की गई। आपने न केवल कंपनी के हितों की परवाह किए बिना व्यक्तिगत उद्देश्य के लिए कंपनी के खातों को अनावश्यक रूप से प्रभावित किया, बल्कि गलत एवं भ्रामक तथ्य प्रस्तुत करके महालेखाकार एवं आयकर विभाग जैसे वैधानिक प्राधिकारियों के समक्ष कंपनी की छवि को भी खराब किया तथा साथ ही कंपनी को आयकर डिफॉल्टर के रूप में चित्रित किया।

2. आपने बिहार राज्य पावर ट्रांसमिशन कंपनी लिमिटेड और बिहार राज्य पावर (होल्टिंग) कंपनी लिमिटेड के बीच हुए लेन-देन को अनावश्यक रूप से बिहार राज्य पावर ट्रांसमिशन कंपनी लिमिटेड, ऊर्जा विभाग और वित्त विभाग के बीच के लेन-देन के रूप में प्रस्तुत किया है, ताकि भ्रम की स्थिति पैदा की जा सके। इस संबंध में आपने बिहार सरकार के ऊर्जा विभाग के प्रधान सचिव को संबोधित पत्र दिनांक 17.08.2016 पर प्रबंध निदेशक, बिहार राज्य पावर ट्रांसमिशन कंपनी लिमिटेड से अनुमोदन प्राप्त किया है। इस भ्रामक प्रस्ताव पर कंपनी प्रबंधन से अनुमोदन प्राप्त करने का आपका एकमात्र उद्देश्य विभिन्न लेखापरीक्षा आपत्तियों से बचाव करना था, क्योंकि आपके पद का दुरुपयोग करते हुए प्रधान सचिव, ऊर्जा विभाग, बिहार सरकार को संबोधित मसौदा पत्र पर अनुमोदन प्राप्त करने के बाद भी यह पत्र जारी नहीं किया गया।

3. जब आपको वर्ष 2017-18 के लेखापरीक्षण के दौरान संदेह हुआ कि वर्ष 2014 से की गई वित्तीय अनियमितता की जानकारी हो सकती है, तब आपने कम्पनी के निदेशक मंडल की 68 वीं बैठक में अपने जालसाजी के स्वरूप के अनुसार अधूरे एवं गलत तथ्यों के आधार पर बिना प्रबन्ध निदेशक की स्वीकृति के 3616.7441 करोड़ रुपये की अंश पूंजी के साथ 195.9595 करोड़ रुपये जोड़ने का प्रस्ताव दिया कि सम्पूर्ण धनराशि 3812.7036 करोड़ रुपये अंश पूंजी के रूप में आवंटित की जा सकती है तथा तदनुसार उक्त मनमाने ढंग से जुटाये गये ऋण को जालसाजी द्वारा अंश पूंजी में परिवर्तित करा लिया, इस सम्बन्ध में आपके द्वारा प्रबन्ध निदेशक से कोई स्वीकृति प्राप्त नहीं की गई है। यह निदेशक मंडल के समक्ष गलत तथ्य देने का अत्यन्त गम्भीर मामला है।

4. जबकि वर्तमान में उक्त राशि रु0 195.9595 करोड़ को आपके द्वारा बिना किसी पूर्वानुमति के जालसाजी करते हुए शेयर पूंजी में परिवर्तित करा लिया गया है, इसके बावजूद महाप्रबंधक (मानव संसाधन), बिहार राज्य विद्युत संचरण कंपनी लिमिटेड द्वारा अपने ज्ञापन दिनांक 07.03.2019 के माध्यम से कारण बताओ नोटिस में वित्तीय अनियमितताओं को स्वीकार करने के स्थान पर भ्रम की स्थिति उत्पन्न करने के उद्देश्य से यह कहा गया है कि आपके द्वारा कंपनी के लेखा पुस्तकों में रु. 195.9595 करोड़ का सही लेखा-जोखा ऋण के रूप में किया गया है तथा इसे ऋण के रूप में दर्ज करने की आवश्यकता है। यह आपके घोर कदाचार एवं घोर स्वेच्छाचारिता को दर्शाता है।

5. आपने हमेशा अपने पद का दुरुपयोग करते हुए मनमाने ढंग से तथा जालसाजी की प्रकृति से युक्त सुनियोजित षडयंत्र के तहत अपनी सुविधानुसार 195.9595 करोड़ रुपए का गलत हिसाब-किताब किया है, साथ ही विरोधाभासी तथा अपूर्ण तथ्यों के आधार पर कंपनी प्रबंधन तथा निदेशक मंडल को गुमराह करने का कदाचार भी किया है। आपके ऐसे कृत्य के कारण कंपनी को आयकर के रूप में 30.19 करोड़ रुपए का भुगतान करना पड़ा है। आपके द्वारा आयकर विभाग को जो भी गलत तथ्य दिए गए हैं, उनसे भविष्य में कर निर्धारण के दौरान इस देयता के बढ़ने की संभावना है।

6. आपने अपनी सुविधानुसार जानबूझकर 144.59 करोड़ रुपए ऋण के रूप में दर्शाए हैं। राज्य योजना के अंतर्गत स्वीकृत 200.86 करोड़ रुपए में से आपके द्वारा वित्तीय वर्ष 2013-14 में होल्डिंग कंपनी से प्राप्त 55.89 करोड़ रुपए अंतरकंपनी शीर्ष में कंपनी खातों में दर्ज किए गए हैं, जबकि दूसरी ओर वर्ष 2016-17 में होल्डिंग कंपनी से प्राप्त 144.59 करोड़ रुपए को राज्य सरकार का ऋण दर्ज किया गया तथा उक्त राज्य ऋण पर बिना किसी प्राधिकरण के मनमाने ढंग से 10.50% प्रति वर्ष ब्याज लगाया गया। आपकी वसीयत के अनुसार एक ही शीर्ष में विभिन्न तिथियों पर प्राप्त धनराशि का अलग-अलग लेखा-जोखा प्रस्तुत करने के कारण कम्पनी की छवि विभिन्न वैधानिक प्राधिकरणों के समक्ष धूमिल हुई है तथा कम्पनी पर गलत लेखा-जोखा प्रस्तुत करने के आरोप में

आयकर विभाग द्वारा कार्यवाही प्रारंभ कर दी गई है। कम्पनी द्वारा 30.19 करोड़ रुपए की अपरिहार्य देनदारियों का अनावश्यक रूप से भुगतान किया गया है।

याचिकाकर्ता द्वारा लिया गया पक्ष

5. याचिकाकर्ता के अनुसार, बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत और बीएसपीटीसीएल द्वारा प्राप्त 195.9595 करोड़ रुपये की राशि एक ऋण थी, न कि निवेश, जिसके विरुद्ध इक्विटी जारी की जानी थी। उक्त राशि के संबंध में संचार में "ऋण" शब्द का प्रयोग किया गया था। दूसरा, याचिकाकर्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि बीएसपीटीसीएल के वार्षिक वित्तीय विवरण का लेखा-परीक्षण भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक और बिहार के महालेखा परीक्षक द्वारा नियुक्त वैधानिक लेखा परीक्षक द्वारा प्रत्येक वित्तीय वर्ष में किया जाता है। याचिकाकर्ता द्वारा अपने लिखित बयान में यह दलील दी गई है कि राज्यदेश (राज्यदर्दश) संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014, विशेष रूप से कहता है:-

".....राज्य योजना के अन्तर्गत उपलब्ध करायी जानेवाली राशि को अंश पूँजी के रूप में निवेश उपलब्ध कराने की स्वीकृति प्रदान की जाती है।"

6. यह आदेश स्पष्ट रूप से राज्य सरकार द्वारा भविष्य में जारी की जाने वाली राशि को संदर्भित करता है, जिसका प्रभाव भविष्य में ही होगा। रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है कि याचिकाकर्ता ने प्रभार ज्ञापन में उल्लिखित व्याख्या के विपरीत अन्यथा व्याख्या करके राज्यदेश (राज्यदर्दश) संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 का उल्लंघन किया है।

7. इस प्रकार, याचिकाकर्ता ने दोहराया कि बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत और बीएसपीटीसीएल द्वारा प्राप्त 195.9595 करोड़ रुपये एक ऋण था, न कि निवेश। याचिकाकर्ता ने बीएसपीटीसीएल और बीएसपीजीसीएल के बीच लेनदेन के बारे में कभी भी कोई गलत बयानी नहीं की, जिसे ऊर्जा और वित्त विभागों के साथ लेनदेन के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। वह 17 अगस्त, 2016 के मसौदा पत्र के लिए जिम्मेदार नहीं था, क्योंकि उसने 16 जनवरी, 2017 के आदेश के आधार पर महाप्रबंधक (एफ एंड ए) के रूप में अपना पदभार ग्रहण किया था और बाद में 18 मई, 2017 को बीएसपीटीसीएल में फिर से शामिल हो गया था।

कार्यवाही

8. प्रतिवादी अधिकारी याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव के लिखित बयान से संतुष्ट नहीं था। तदनुसार, विभागीय जांच शुरू की गई थी। याचिकाकर्ता को विभिन्न लेखा शीर्षों के तहत प्राप्त राशि के संबंध में विवरण तैयार करने के संबंध में लापरवाह पाया गया था।

याचिकाकर्ता द्वारा इस तरह के कृत्य और चूक को घोर वित्तीय अनियमितता, कुप्रबंधन और लापरवाही का कार्य माना गया था, जो कदाचार के बराबर है। जांच रिपोर्ट अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष रखी गई थी। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने बीएसपीएचसीएल के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक की मंजूरी से बर्खास्तगी का आदेश पारित किया। याचिकाकर्ता ने तत्काल रिट याचिका दायर करके अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित उक्त आदेश को चुनौती दी है। इस संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा विशेष रूप से यह तर्क दिया गया है कि चूंकि बर्खास्तगी का आदेश सीएमडी द्वारा अनुशंसित अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित किया गया था, इसलिए अपील की प्राथमिकता एक निरर्थक औपचारिकता होगी क्योंकि सीएमडी अपीलीय प्राधिकारी है जिसने पहले ही अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश को मंजूरी दे दी है।

मुकदमा

9. याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय के पूर्ण अधिकार क्षेत्र का हवाला देते हुए बर्खास्तगी के आदेश को चुनौती दी थी।

10. याचिकाकर्ता की दलीलें इस प्रकार हैं:-

1. बर्खास्तगी मनमाना और बिना किसी उचित आधार के की गई। प्रतिवादी द्वारा की गई प्रशासनिक कार्यवाई की ओर ले जाने वाले प्रक्रियात्मक कदमों की कानूनी सिद्धांतों के अनुपालन का निर्धारण करने के लिए गहन जांच की जानी चाहिए। घटनाओं का कालक्रम और प्रासंगिक दस्तावेज (अनुलग्नक - 6, 7 और 8) संभावित प्रक्रियात्मक चूक का संकेत देते हैं। याचिकाकर्ता का तर्क है कि दिए गए स्पष्टीकरण पर उचित विचार किए बिना निर्णय लिया गया, जो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के संभावित उल्लंघन को उजागर करता है।

2. याचिकाकर्ता का दावा है कि जांच रिपोर्ट सीसीए नियम, 2005 के नियम 17 के अनुसार तैयार नहीं की गई थी। यह निर्धारित करने के लिए कि क्या जांच निष्पक्ष रूप से की गई थी, निर्धारित दिशा-निर्देशों के विरुद्ध प्रक्रियागत अनुपालन का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। याचिकाकर्ता का तर्क है कि महत्वपूर्ण दस्तावेजों और साक्ष्यों को नजरअंदाज किया गया या गलत व्याख्या की गई, जिससे संभावित रूप से अनुचित निष्कर्ष निकल सकता है। जांच अधिकारी की भूमिका और कार्यों की जांच की जानी चाहिए, विशेष रूप से याचिकाकर्ता द्वारा

प्रस्तुत विस्तृत उत्तर और सहायक दस्तावेजों पर विचार करते हुए (अनुलग्नक - 9, 9 ए और 10)

3. मुख्य मुद्दा 30.06.2014 के ज्ञापन संख्या 2175 की व्याख्या के इर्द-गिर्द घूमता है। याचिकाकर्ता का कहना है कि यह ज्ञापन राज्य सरकार द्वारा जारी की जाने वाली भविष्य की राशि के लिए था, न कि पहले प्राप्त 195.9595 करोड़ रुपये की राशि के लिए। याचिकाकर्ता की व्याख्या वैधानिक लेखा परीक्षक के जवाब (अनुलग्नक-10) द्वारा समर्थित है, जिसमें कहा गया है कि राशि को ऋण के रूप में माना जाना चाहिए न कि इक्विटी के रूप में। याचिकाकर्ता के कार्यों की वैधता निर्धारित करने में इस ज्ञापन का उचित अनुप्रयोग और समझ महत्वपूर्ण है।

4. याचिकाकर्ता का दावा है कि जांच के दौरान प्रासंगिक दस्तावेज उपलब्ध नहीं कराए गए, जिससे उसका अपना बचाव करने की क्षमता प्रभावित हुई। यह आरोप जांच प्रक्रिया की निष्पक्षता और संपूर्णता के बारे में चिंता पैदा करता है। सभी प्रासंगिक दस्तावेजों तक पहुंच का अधिकार निष्पक्ष सुनवाई का एक बुनियादी पहलू है, और इन दस्तावेजों को उपलब्ध कराने में किसी भी तरह की विफलता को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन माना जा सकता है। इस दावे की वैधता का आकलन करने के लिए दस्तावेज अनुरोधों से संबंधित संचार और प्रतिक्रिया की समीक्षा की जानी चाहिए।

5. याचिकाकर्ता का तर्क है कि प्रस्तुतकर्ता कार्यालय को कारण बताओ नोटिस में उठाए गए मुद्दों के बारे में ऊर्जा विभाग और बी.एस.पी.एच.सी.एल. से राय मांगनी चाहिए थी। इन रायों को प्राप्त करने में विफलता व्यापक जांच की कमी का संकेत दे सकती है। संबंधित अधिकारियों की राय अतिरिक्त जानकारी या स्पष्टीकरण प्रदान कर सकती थी, जो संभावित रूप से जांच के परिणाम को प्रभावित कर सकती थी। यह चूक, यदि सिद्ध हो जाती है, तो यह सुझाव देती है कि जांच प्रक्रिया अधूरी और संभावित रूप से पक्षपातपूर्ण थी।

6. याचिकाकर्ता का तर्क है कि मामला मुख्य रूप से वित्तीय दस्तावेजों की व्याख्या के बारे में है, न कि वास्तविक वित्तीय अनियमितता के बारे में। यह अंतर महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आरोपों की प्रकृति और गंभीरता को प्रभावित

करता है। याचिकाकर्ता का तर्क है कि वित्तीय रिकॉर्ड बनाए गए थे और राज्य सरकार से उपलब्ध दिशा-निर्देशों और संचार के आधार पर सद्भावनापूर्वक व्याख्या की गई थी। इसलिए, किसी भी विसंगति को जानबूझकर किए गए कदाचार के बजाय व्याख्यात्मक मुद्दों के रूप में देखा जाना चाहिए।

7. याचिकाकर्ता ने सीसीए नियम, 2005 के नियम 17(3) के साथ जांच कार्यालय के अनुपालन को चुनौती दी है। यह नियम उन प्रक्रियात्मक चरणों को रेखांकित करता है जिनका जांच के दौरान पालन किया जाना चाहिए, जिसमें साक्ष्य प्रस्तुत करना, जिरह करना और जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करना शामिल है। इन निर्धारित चरणों से कोई भी विचलन जांच के निष्कर्षों को अमान्य कर सकता है। नियम 17(3) का पालन सुनिश्चित करने के लिए जांच कार्यालय द्वारा प्रक्रियात्मक रिकॉर्ड और की गई कार्रवाइयों की बारीकी से जांच की जानी चाहिए।

8. याचिकाकर्ता का दावा है कि उसे अपना बचाव तैयार करने के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया गया। यह निर्धारित करने के लिए समयसीमा और प्रक्रियात्मक चरणों की समीक्षा की जानी चाहिए कि क्या आवंटित समय निष्पक्ष बचाव के लिए पर्याप्त था। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों की आवश्यकता है कि अभियुक्त को अपना मामला तैयार करने और प्रस्तुत करने के लिए उचित समय और अवसर दिया जाना चाहिए। कोई भी अनुचित जल्दबाजी या अनुचित समयसीमा जांच की निष्पक्षता से समझौता कर सकती है।

9. याचिकाकर्ता ने बताया कि जांच में विवादित दस्तावेजों के बारे में ऊर्जा विभाग से स्पष्टीकरण नहीं मांगा गया। इस तरह के स्पष्टीकरण का न होना सतही या पक्षपातपूर्ण जांच का संकेत हो सकता है। वित्तीय दस्तावेजों की व्याख्या और फंड को ऋण या इक्विटी के रूप में वर्गीकृत करने से संबंधित अस्पष्टताओं को हल करने में ऊर्जा विभाग का इनपुट महत्वपूर्ण होता।

10. याचिकाकर्ता का तर्क है कि कंपनी को गुमराह करने, अपने पद का दुरुपयोग करने, मनमाना आचरण करने और जालसाजी करने के आरोपों का सबूतों से समर्थन नहीं किया गया है। इन आरोपों को ठोस सबूतों के साथ साबित करने का दायित्व प्रतिवादी पर है। इन आरोपों की वैधता का आकलन करने के लिए की जांच रिपोर्ट और सहायक दस्तावेजों की सावधानीपूर्वक समीक्षा की जानी

चाहिए। प्रस्तुत साक्ष्यों में कोई भी कमी या असंगतता आरोपों की विश्वसनीयता को कम कर सकती है।

11. याचिकाकर्ता ने रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य (2009) 2 एस. सी. सी 570 मामले का हवाला देते हुए तर्क दिया कि इस मामले में निर्धारित सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया था। इस मामले के सिद्धांतों की तुलना वर्तमान मामले से की जानी चाहिए ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या इसी तरह के उल्लंघन हुए हैं। रूप सिंह नेगी के मामले में निष्पक्ष जांच प्रक्रियाओं की आवश्यकता और आरोपों को पुष्ट करने में साक्ष्य के महत्व पर जोर दिया गया है।

12. याचिकाकर्ता ने जांच अधिकारी और प्रस्तुतकर्ता अधिकारी की नियुक्ति की वैधता पर सवाल उठाया है। प्रक्रियात्मक रिकॉर्ड और नियुक्तियों की जांच की जानी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि वे प्रासंगिक दिशा-निर्देशों और नियमों के अनुसार की गई थीं। नियुक्ति प्रक्रिया में कोई भी अनियमितता जांच की निष्पक्षता और वैधता को प्रभावित कर सकती है।

13. याचिकाकर्ता का तर्क है कि प्रतिवादी के कार्यों ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन किया है, जो समानता के अधिकार और जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार से संबंधित हैं। प्रतिवादी द्वारा उठाए गए प्रशासनिक कार्यों और प्रक्रियात्मक कदमों का इन संवैधानिक प्रावधानों के विरुद्ध मूल्यांकन किया जाना चाहिए ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि कोई उल्लंघन हुआ है या नहीं। कोई भी कार्रवाई जो मनमाना, भेदभावपूर्ण या अनुचित पाई जाती है, उसे असंवैधानिक माना जा सकता है।

प्रार्थना

11. याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार का आह्वान करते हुए निम्नलिखित राहत की प्रार्थना की है: -

(i) महाप्रबंधक, मानव संसाधन/प्रशासन के हस्ताक्षर से जारी जापन संख्या 395, दिनांक 03.02.2020 को रद्द करने के लिए उत्प्रेषण की प्रकृति में एक उचित रिट आदेश निर्देश जारी करना, जिसके तहत लिए गए

निर्णय के आधार पर याचिकाकर्ता को तत्काल प्रभाव से सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है (अनुलग्नक-19, पृष्ठ 286)

(ii) दिनांक 25.10.2019 की जांच रिपोर्ट को रद्द करने के लिए उत्प्रेषण की प्रकृति में एक उचित रिट आदेश निर्देश जारी करना, जिसके तहत जांच अधिकारी ने प्रस्तुत स्पष्टीकरण पर विचार किए बिना याचिकाकर्ता को आरोप ज्ञापन में निहित आरोपों का दोषी ठहराया है। (अनुलग्नक-15 पृष्ठ 182)

(iii) प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता को बहाल करने और सेवा में शामिल होने की तारीख से 03.02.2020 के ज्ञापन संख्या 395 को रद्द करने के बाद, याचिकाकर्ता को सभी परिणामी राहतें प्रदान करने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक उचित रिट आदेश निर्देश जारी करना, जिसमें अस्वीकृत वेतन भी शामिल है, लेकिन उस तक सीमित नहीं है।

(iv) वर्तमान रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई भी बलपूर्वक कार्रवाई करने से रोकने के लिए एक उचित रिट आदेश जारी करना, जिसमें याचिकाकर्ता को प्रदान की गई सुविधाएं, जैसे क्वार्टर और सेवा से जुड़ी अन्य संबंधित सुविधाएं वापस लेना शामिल है।

(v) कोई अन्य राहत जिसके लिए याचिकाकर्ता माननीय न्यायालय द्वारा हकदार पाया गया हो।

प्रतिवादियों का मामला

12. प्रतिवादी संख्या 5 और 6 की ओर से जवाबी हलफनामा दाखिल करके याचिकाकर्ता के मामले को विशेष रूप से नकार दिया गया और विवादित किया गया। प्रतिवादियों की ओर से की गई प्रारंभिक आपत्ति यह है कि रिट याचिका अनुरक्षणीय नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता ने निदेशक मंडल के समक्ष अपील दायर करने के वैकल्पिक उपाय को समाप्त नहीं किया है, जो कि अपीलीय प्राधिकारी है। प्रतिवादियों की ओर से यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप गंभीर प्रकृति के थे, जिसमें वित्तीय अनियमितताएं

शामिल थीं और सभी आरोप दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर साबित हुए थे। याचिकाकर्ता द्वारा यह आरोप नहीं लगाया गया है कि जांच अधिकारी अनुचित था पटना उच्च न्यायालय सीडब्ल्यूजेसी संख्या 7196 ऑफ 2021 दिनांक 25-07-2024 या यह कि कार्यवाही स्थापित मानदंडों के उल्लंघन में आयोजित की गई थी। प्रतिवादियों का यह विशिष्ट मामला है कि वित्तीय कुप्रबंधन के कारण कंपनी को महत्वपूर्ण वित्तीय नुकसान हुआ याचिकाकर्ता पर लापरवाहीपूर्ण लेखांकन के लिए 30.19 करोड़ रुपये का जुर्माना लगाया गया।

याचिकाकर्ता की ओर से तर्क

13. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री वाई.वी. गिरि ने प्रस्तुत किया है कि आरोप पत्र के सावधानीपूर्वक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि याचिकाकर्ता ने 30 जून, 2014 के राज्यदेश संख्या 2175 की गलत व्याख्या की है, जिसके लिए उसने कथित तौर पर 195.9595 करोड़ रुपये की राशि ऋण के रूप में दिखाई है, जिससे निदेशक मंडल को अधूरी और भ्रामक जानकारी दी गई है। हालांकि, याचिकाकर्ता के खिलाफ वित्तीय गबन या दुर्विनियोजन का कोई आरोप नहीं है, जिससे याचिकाकर्ता को मौद्रिक लाभ हुआ और कंपनी को वित्तीय नुकसान हुआ। याचिकाकर्ता के ऐसे कृत्य को, अधिक से अधिक, लापरवाही, निर्णय की त्रुटि या भूल के रूप में माना जा सकता है। **भारत संघ और अन्य बनाम जे. अहमद, (1979) 2 एससीसी 286** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला देते हुए रिपोर्ट किया गया, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा प्रस्तुत किया गया कि लापरवाही, निर्णय की त्रुटि या गलती का कार्य कदाचार नहीं माना जाता है। इसी सिद्धांत पर, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने **इन रे बनाम मेहर सिंह सैनी, अध्यक्ष, हरियाणा लोक सेवा आयोग और अन्य, (2010) 13 एससीसी 586** में रिपोर्ट किए गए मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय का उल्लेख किया। **मेहर सिंह सैनी (सुप्रा)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह माना गया है कि केवल निर्णय की त्रुटि, लापरवाही या कर्तव्य के प्रदर्शन में लापरवाही, शिकायत किए गए कार्य में निषिद्ध गुणवत्ता या चरित्र के बिना कदाचार नहीं माना जाएगा। इसी सिद्धांत को इस न्यायालय ने **गणेश प्रसाद यादव बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2021 (5) बीएलजे 256** में अपनाया था, जिसमें यह माना

गया था कि कर्तव्य के निष्पादन में दक्षता के उच्चतम मानक को प्राप्त करने में विफलता, लापरवाही का अनुमान लगाने की अनुमति देती है, कदाचार नहीं माना जाएगा।

14. दूसरे, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने दृढ़तापूर्वक तर्क दिया कि जांच अधिकारी का निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था। याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप का सार ज्ञापन संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 का अनुपालन न करना है। जांच अधिकारी होने के नाते, प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने, हालांकि, इसके लेखक की जांच करके उक्त "राज्यदेश" को साबित करने का कोई प्रयास नहीं किया। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सरोज कुमार सिंह** के मामले का हवाला दिया, जिसकी रिपोर्ट (2010) 2 एससीसी 776 में दी गई थी और प्रस्तुत किया कि गवाह की जांच के बिना कोई दस्तावेज साबित नहीं किया जा सकता है। उन्होंने **रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का भी हवाला दिया, जिसकी रिपोर्ट (2009) 2 एससीसी 570 में दी गई है और कहा है कि दोषी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोप सिद्ध होने चाहिए। जांच अधिकारी का कर्तव्य है कि वह पक्षों द्वारा रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री पर विचार करते हुए निष्कर्ष पर पहुंचे। हालांकि, याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील ने तर्क दिया कि अनुशासनात्मक कार्यवाही एक अर्ध न्यायिक कार्यवाही है और जांच अधिकारी अर्ध न्यायिक शक्ति का प्रयोग करता है और इसलिए, जांच अधिकारी का यह मूल कर्तव्य है कि वह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करे। प्राकृतिक न्याय का नियम आरोपित अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोपों की साक्ष्य संबंधी सत्यनिष्ठा की बात करता है। अभियोजन पक्ष की ओर से किसी भी गवाह की जांच न किए जाने से यह निष्कर्ष निकलता है कि विभागीय कार्यवाही बिना किसी साक्ष्य के की गई थी और ऐसी कार्यवाही के आधार पर आरोपी अधिकारी को कदाचार के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

15. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि याचिकाकर्ता ने 30 जून, 2014 के ज्ञापन संख्या 2175 के आशय पर ऊर्जा विभाग से स्पष्टीकरण मांगा था। उन्होंने कारण बताओ नोटिस के अपने दोनों उत्तरों में, अर्थात् आरोप-पत्र की तामील के बाद और तत्पश्चात जांच अधिकारी के निर्णय के बाद, उक्त तथ्य का उल्लेख किया। हालांकि, प्रतिवादियों द्वारा उन्हें कोई उत्तर नहीं दिया गया।

16. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे दलील दी कि उनके खिलाफ शुरू की गई विभागीय कार्यवाही शुरू से ही शून्य थी। अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए उन्होंने यह भी बताया कि याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही बीएसपीटीसीएल के प्रबंध निदेशक द्वारा शुरू की गई थी। हालांकि, बीएसएचपीसीएल (पूर्ववर्ती बीएसईबी) के अध्यक्ष याचिकाकर्ता के नियुक्ति प्राधिकारी थे। इस प्रकार, बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 2005 के नियम 2 (एफ) एनडी (जे) के साथ नियम 16 का उल्लंघन करते हुए याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई थी। इस बिंदु पर कानून अब इस बात के लिए मान्य नहीं है कि नियुक्ति प्राधिकारी ही एकमात्र अनुशासनात्मक प्राधिकारी है और कोई अन्य प्राधिकारी कोई कार्यवाही शुरू नहीं कर सकता है। याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत जारी दिनांक 9 नवंबर, 2020 के उत्तर (याचिकाकर्ता द्वारा दायर पूरक हलफनामे के अनुलग्नक-23) का भी हवाला दिया, जिसमें स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि चूंकि याचिकाकर्ता की पोस्टिंग बीएसपीजीसीएल में है, इसलिए विभागीय कार्यवाही शुरू करने के लिए सीएमडी, बीसीपीएचसीएल की मंजूरी आवश्यक थी और चूंकि विभागीय कार्यवाही सीएमडी, बीएसपीएचसीएल की मंजूरी के बिना शुरू की गई थी, इसलिए याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत किया गया है कि विभागीय कार्यवाही शुरू से ही शून्य थी।

17. आरोप संख्या 1 पर याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि 1 नवंबर, 2012 से 31 मार्च, 2014 के बीच की अवधि में बीएसपीटीसीएल को 195.9595 करोड़ रुपये की राशि प्राप्त हुई थी। याचिकाकर्ता को 26 अप्रैल, 2013 को बीएसपीटीसीएल में उप महाप्रबंधक (लेखा) के पद पर नियुक्त किया गया था। 195.9595 करोड़ रुपये की उक्त राशि के साथ दिए गए पत्र में "ऋण" शब्द का प्रयोग किया गया था और साथ ही ऋण की शर्तें भी दी गई थीं। उक्त पत्र में यह भी कहा गया है कि राशि को मुख्य शीर्ष 6801 - ऊर्जा परियोजनाओं के लिए ऋण के रूप में लेखांकित किया जाएगा। इसलिए याचिकाकर्ता को प्राप्त राशि को "ऋण" के रूप में बताने के अलावा कोई वैकल्पिक व्याख्या नहीं मिली। प्रतिवादी यह दर्शाने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत करने में असफल रहे कि बिहार सरकार ने स्वीकृति प्राधिकारी होने के नाते उक्त राशि को इक्विटी के रूप में माना है। उप महाप्रबंधक के पद पर तैनात होने के कारण, याचिकाकर्ता के पास किसी राशि को ऋण या

इक्विटी के रूप में मानने के संबंध में कोई अंतिम निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं था। अंतिम निर्णय लेना और उक्त निर्णय को होल्डिंग कंपनी को अग्रेषित करना सहायक कंपनियों के महाप्रबंधक की अंतिम शक्ति है। याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि एक लेखापरीक्षा अवलोकन उठाया गया था कि ऊर्जा विभाग राज्यदेश संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 के अनुसार, उक्त निवेश को खाते की किताबों में इक्विटी के रूप में माना जाना था, हालांकि, वैधानिक लेखा परीक्षक ने पुष्टि की कि चूंकि राज्य सरकार द्वारा ऋण की राशि को इक्विटी में परिवर्तित करने के लिए कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई थी, इसलिए इसे ऋण के रूप में दीर्घकालिक उधार के शीर्षक के तहत उचित रूप से दिखाया गया था।

18. द्वितीय आरोप के संबंध में याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने 18 मई, 2017 को बीएसपीटीसीएल में महाप्रबंधक के रूप में पुनः कार्यभार ग्रहण किया। कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात वह अपने पूर्व पत्र दिनांक 17 अगस्त, 2016 को नहीं खोज पाया। इसलिए उसने प्रबंध निदेशक के समक्ष एक अन्य मसौदा प्रस्तुत किया, जिसे उसने अनुमोदित किया था तथा उस पर उसका हस्ताक्षर है। उक्त मसौदा वर्ष 2017 में प्रस्तुत किया गया था, जैसा कि मसौदे के ऊपर बाईं ओर की प्रविष्टि से स्पष्ट है। इसलिए प्रबंध निदेशक ने उक्त मसौदे को अनुमोदित किया था तथा स्वीकृत मसौदा कार्यालय में प्रचलित प्रक्रिया के अनुसार पत्र के रूप में जारी किया गया था। इसलिए यह आरोप कि उसने बीएसपीटीसीएल तथा बीएसपीएचसीएल के बीच हुए लेन-देन को अनावश्यक रूप से बीएसपीटीसीएल, ऊर्जा विभाग तथा वित्त विभाग के बीच हुए लेन-देन के रूप में प्रस्तुत किया, भ्रम पैदा करने के उद्देश्य से टिकने लायक नहीं है।

19. आरोप संख्या 3 के संबंध में याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के रुख को स्पष्ट किया है। उन्होंने कहा है कि कंपनी सचिव, बीएसपीएचसीएल ने तत्कालीन महाप्रबंधक (वित्त एवं लेखा), बीएसपीएचसीएल के कहने पर 195.9595 करोड़ रुपये की राशि को 3616.7441 करोड़ रुपये में जोड़ दिया, जिससे कुल कथित राशि 3812.7035 करोड़ रुपये हो गई, जो 20 अप्रैल, 2018 के पत्र (अनुलग्नक-12 ए) से स्पष्ट है। प्रबंध निदेशक ने याचिकाकर्ता की जानकारी के बिना 20 अप्रैल, 2018 को उक्त राशि के

समामेलन को मंजूरी दे दी थी, ताकि इसे आगे की मंजूरी के लिए निदेशक मंडल के समक्ष रखा जा सके।

20. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, आरोप संख्या 4 पुनरावृत्ति है तथा इसका उत्तर पहले ही दिया जा चुका है।

21. 5 वें और 6 वें प्रभार के संबंध में, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि 17 अगस्त, 2016 के पत्र के माध्यम से याचिकाकर्ता ने ऋण को इक्विटी में रूपांतरण के लिए मुख्य सचिव, ऊर्जा विभाग से अनुमोदन मांगा था। हालांकि, ऐसा किए बिना, मुख्य सचिव, बीएसपीएचसीएल द्वारा तैयार पत्र पर, राशि को प्रबंध निदेशक और निदेशक मंडल द्वारा रूपांतरण के लिए अनुमोदित किया गया था, जिसके कारण 30.19 करोड़ की आयकर देनदारी हुई, जिसे याचिकाकर्ता के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा यह भी प्रस्तुत किया गया है कि 6 सितंबर, 2016 और 28 सितंबर, 2016 को बीएसपीएचसीएल द्वारा दो हिस्सों में 144.59 करोड़ रुपये की राशि हस्तांतरित की गई थी। 144.59 करोड़ रुपये के मामले में याचिकाकर्ता की ओर से दलील दी गई है कि उक्त राशि बीएसईबी के पुनर्गठन से पहले प्राप्त 200 करोड़ रुपये का हिस्सा थी। इसके लिए 30 अगस्त, 2016 के पत्र सहित कई पत्रों के माध्यम से स्पष्टीकरण भी मांगा गया था। 55.89 करोड़ रुपये के संबंध में याचिकाकर्ता ने पत्र संख्या 878, दिनांक 10 सितंबर, 2013 (अनुलग्नक-18) और पत्र संख्या 504, दिनांक 4 फरवरी, 2016 का हवाला दिया, जिससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि उक्त राशि सावधि जमा के रूप में प्राप्त की गई थी। इस प्रकार, अनुसार याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने निष्कर्ष निकाला है कि प्रतिवादी याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए किसी भी आरोप को साबित करने में विफल रहे हैं और तदनुसार, बर्खास्तगी का आदेश अवैध, अन्यायपूर्ण, अनुचित है और रद्द किए जाने योग्य है। वह सेवा में पुनः बहाली का भी हकदार है।

प्रतिवादी संख्या 5 और 6 की ओर से तर्क

22. प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मृगांक मौली ने सर्वप्रथम अपनी सामान्य निष्पक्षता के साथ यह प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को किसी भी

प्रकार के गलत लाभ के लिए विभागीय कार्यवाही का सामना नहीं करना पड़ा तथा धन के गबन या दुरुपयोग के कारण प्रतिवादियों को हुई गलत हानि के लिए भी उसे कोई कार्यवाही का सामना नहीं करना पड़ा। याचिकाकर्ता द्वारा वित्त एवं लेखा के संबंध में विवेक का प्रयोग न करने, 30 जून, 2014 के ज्ञापन संख्या 2175 की गलत व्याख्या करने तथा बीएसपीटीसीएल द्वारा प्राप्त की गई कुछ राशि को ऋण के रूप में दर्शाकर निरंतर लापरवाही बरतने के कारण विभाग को आर्थिक हानि हुई। इस परिचय के साथ, प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता ने न केवल बीएसपीटीसीएल और उसके प्रबंध निदेशक को गलत तरीके से प्रस्तुत किया, बल्कि आयकर विभाग और नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक, क्रमशः एक सांविधिक प्राधिकरण और एक संवैधानिक प्राधिकरण के समक्ष दो विरोधाभासी बयान देकर जानबूझकर मूर्ख बनाया, जिसमें 195.9595 करोड़ रुपये की उक्त राशि को क्रमशः इक्विटी और ऋण के रूप में उल्लेख किया गया - जबकि आयकर अधिकारियों के समक्ष याचिकाकर्ता ने प्रतिनिधित्व किया कि 195.9595 करोड़ रुपये की उक्त राशि एक इक्विटी थी और इसलिए इसे उस पर अर्जित ब्याज के साथ "पूंजी प्राप्ति" के रूप में माना जाना चाहिए - जबकि आयकर अधिकारियों की आपत्ति यह थी कि उक्त राशि पर अर्जित ब्याज को "राजस्व प्राप्ति" के रूप में माना जाना चाहिए और इसलिए आयकर के लिए उत्तरदायी है।

23. आयकर अधिकारियों ने कर निर्धारण वर्ष 2014-2015 के लिए कार्यवाही शुरू की, जिसमें 69,56,14,673/- रुपये के ब्याज से अर्जित राशि को "राजस्व प्राप्ति" के रूप में दावा किया गया और आयकर के लिए उत्तरदायी बताया गया। जवाब में, याचिकाकर्ता ने 30 जून, 2014 के पत्र संख्या 2175 का हवाला दिया, जिसमें आयकर अधिकारियों को सूचित किया गया कि 195.9595 करोड़ रुपये की राशि राज्य सरकार द्वारा इक्विटी निवेश थी और उस पर अर्जित ब्याज को "पूंजी प्राप्ति" माना जाना था और इसलिए यह कर योग्य नहीं था।

24. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इक्विटी पूंजी को कंपनी की पूंजी और कंपनी की परिसंपत्तियों के विकास के लिए उपयोग किए जाने वाले फंड का प्रतिनिधित्व करने वाली पूंजी रसीद के रूप में माना जाता है और इस तरह आयकर से छूट दी जाती है। इसके विपरीत, राजस्व प्राप्ति कंपनी द्वारा व्यवसाय के नियमित क्रम में अर्जित आय हैं और सभी ब्याज आय को राजस्व रसीद के रूप में माना जाता है और उन्हें लाभ और हानि खाते में

स्थानांतरित किया जाना चाहिए और नियामक आवश्यकताओं के अनुसार उस पर लागू करों का भुगतान किया जाना चाहिए।

25. नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा 31 मार्च, 2014 से 31 मार्च, 2016 के बीच की अवधि को लेकर उठाई गई आपत्तियों के विरुद्ध, याचिकाकर्ता ने लगातार यह रुख अपनाया कि 195.9595 करोड़ रुपये की उक्त राशि ऋण राशि थी और यह इक्विटी नहीं थी। याचिकाकर्ता की ओर से यह जोरदार ढंग से कहा गया है कि उनके द्वारा की गई व्याख्या की पुष्टि वैधानिक लेखा परीक्षकों द्वारा की गई थी, जबकि वास्तव में उक्त राय स्वयं याचिकाकर्ता द्वारा वैधानिक लेखा परीक्षकों को दिए गए स्पष्टीकरण पर आधारित थी।

26. प्रतिवादियों का मामला पत्र संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 की व्याख्या के संबंध में नहीं है। इसके विपरीत, बचाव पक्ष का मामला यह है कि आयकर प्राधिकरण के समक्ष याचिकाकर्ता द्वारा गलत बयानी के कारण कंपनी की छवि खराब हुई और आयकर के भुगतान के लिए बीएसपीटीसीएल पर 30.19 करोड़ रुपये की देनदारी बनी। दूसरे, सीएजी के समक्ष अपनाए गए रुख के परिणामस्वरूप, इक्विटी को 10.50 प्रतिशत की दर से ऋण के रूप में बताया गया, जिससे बीएसपीटीसीएल की दीर्घकालिक उधारी में वृद्धि हुई और ट्रांसमिशन की लागत में वृद्धि के कारण बिहार राज्य के निवासियों के लिए टैरिफ में और वृद्धि हुई। प्रतिवादियों के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता को हमेशा से पता था कि पत्र संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 में विशेष रूप से कहा गया था कि पुनर्गठन की तिथि के बाद हस्तांतरित राशि को इक्विटी पूंजी के रूप में माना जाएगा, जो आयकर अधिकारियों के समक्ष उनके बयान से स्पष्ट है और फिर भी उन्होंने सीएजी के समक्ष यह प्रस्तुत करना जारी रखा कि उन्होंने जो राशि बताई है वह इक्विटी नहीं बल्कि राज्य सरकार द्वारा दिया गया ऋण है।

27. आरोप संख्या 2 के संबंध में, प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता ने गलत बयान दिया है कि 195.9595 करोड़ रुपये की उक्त राशि राज्य सरकार द्वारा बीएसपीटीसीएल के पक्ष में दी गई थी। हालांकि, तथ्य यह है कि धन का उक्त हस्तांतरण बीएसपीएचसीएल द्वारा बीएसपीटीसीएल को किया गया था और पूरे लेनदेन का राज्य सरकार से कोई लेना-देना नहीं था। प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील ने यह

भी प्रस्तुत किया है कि बीएसपीएचसीएल की सभी सहायक कंपनियों ने पहले ही बीएसपीएचसीएल के निवेश को बीएसपीएचसीएल के पक्ष में इक्विटी में परिवर्तित कर लिया था और फिर भी याचिकाकर्ता ने बीएसपीटीसीएल के प्रबंध निदेशक द्वारा प्रधान सचिव, ऊर्जा विभाग, बिहार सरकार, पटना को 28 सितंबर, 2017 को एक पत्र लिखना सुनिश्चित किया है, जिसमें उनसे रुपये के निवेश की प्रकृति को स्पष्ट करने के लिए कहा गया है। 195.9595 करोड़ रुपये। यह विशेष रूप से और जानबूझकर याचिकाकर्ता के इशारे पर किया गया था ताकि उसकी गलत बयानी और लापरवाही को दबाया जा सके।

28. आरोप संख्या 3 के मुद्दे पर, प्रतिवादियों के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने अपने लिखित तर्कों में बचाव पक्ष के बारे में विस्तार से बताया है। मैं लिखित नोटों में बताए गए उनके तर्क को पुनः प्रस्तुत करना चाहता हूँ, जो इस प्रकार है:

"यह प्रबंध निदेशक की मंजूरी के बिना 195.9595 करोड़ रुपये को इक्विटी में परिवर्तित करने के संबंध में है।

उनके अपने पत्रों और बीएसपीएचसीएल के पत्रों से समयरेखा स्पष्ट होती है -

28.09.2017 पृष्ठ 229	याचिकाकर्ता ने प्रबंध निदेशक को पत्र लिखकर 195.9595 करोड़ रुपये की प्रकृति के बारे में पूछताछ करने को कहा।
05.02.2018 दिनांक 03.04.2018 के पत्र पृष्ठ 224 में संदर्भित	बीएसपीएचसीएल को 3592.36 करोड़ रुपए इक्विटी में बदलने के लिए पत्र।
03.04.2018 पृष्ठ 224	याचिकाकर्ता ने महाप्रबंधक (वित्त एवं प्रशासन) के रूप में बीएसपीएचसीएल के महाप्रबंधक को पत्र लिखकर उन्हें सीएजी की आपत्ति के बारे में सूचित किया और बीएसपीएचसीएल के निवेश (3592.36 करोड़ रुपये) को इक्विटी में बदलने की मांग की।

20.04.2018 पृष्ठ 222 पृष्ठ 223	बीएसपीएचसीएल के जीएम फाइनेंस ने बीएसपीटीसीएल को 3812.703 करोड़ रुपए को इक्विटी में बदलने के लिए पत्र लिखा है, जिसमें 195.9595 करोड़ रुपए शामिल हैं
20.04.2018 पृष्ठ 226 से शुरू होता है पृष्ठ 227 पर प्रासंगिक	3812.703 करोड़ रुपये, जिसमें 195.9595 करोड़ रुपये शामिल थे, को इक्विटी में बदलने का प्रस्ताव कंपनी सचिव बीएसपीएचसीएल द्वारा प्रस्तुत किया गया, जिस पर याचिकाकर्ता ने बिना किसी आपत्ति के हस्ताक्षर कर दिए।
23.05.2018 पृष्ठ 189 पर संदर्भित अर्थात् जांच रिपोर्ट का भाग और आरोप पत्र सूची का दस्तावेज क्रमांक (X) पृष्ठ 69	याचिकाकर्ता ने 3812.7036080 करोड़ रुपये की राशि को इक्विटी में बदलने की पहल की है, जिसमें 195.9595 करोड़ रुपये शामिल हैं और इस संबंध में याचिकाकर्ता के प्रस्ताव को एजेंडा नोट दिनांक 23.05.2018 के रूप में जांच अधिकारी द्वारा इस जांच रिपोर्ट में उद्धृत किया गया है।

28.09.2017 को याचिकाकर्ता ने एमडी, बीएसपीटीसीएल को राज्य सरकार को एक पत्र लिखने के लिए कहा, जिसमें उनसे 195.9595 करोड़ रुपये के निवेश की प्रकृति के बारे में पूछा गया। 05.02.2018 को, राज्य सरकार को पत्र लिखने के चार महीने के भीतर - और राज्य सरकार के जवाब का इंतजार किए बिना - याचिकाकर्ता ने रूपांतरण के लिए बीएसपीएचसीएल को पत्र लिखकर उक्त राशि को इक्विटी में बदलने की प्रक्रिया शुरू की और इसके बाद 03.04.2018 का पत्र भेजा। बीएसपीएचसीएल के पत्र के साथ (पृष्ठ 224 पर संदर्भित)। बीएसपीएचसीएल के दिनांक 20.04.2018 के उत्तर के आधार पर वह सुविधाजनक रूप से प्रस्ताव से सहमत हो जाते हैं और फिर 23.05.2018 को प्रबंध निदेशक बीएसपीटीसीएल की मंजूरी के बिना निदेशक मंडल के समक्ष एक एजेंडा नोट (जांच रिपोर्ट के हिस्से के रूप में पृष्ठ 189 पर उद्धृत और वही पृष्ठ 69 क्रमांक एक्स पर दस्तावेजों की सूची का हिस्सा था) रखते

हैं, जिसमें 3812.7036080 करोड़ रुपये को इक्विटी में परिवर्तित करने के संबंध में शामिल है, जिसमें 195.9595 करोड़ रुपये शामिल हैं।

याचिकाकर्ता ने कभी भी 3812.7036080 करोड़ रुपये के आंकड़ों पर आपत्ति नहीं की, जिसे बीएसपीएचसीएल के पक्ष में इक्विटी में परिवर्तित किया जाना था। कंपनी सचिव बीएसपीएचसीएल के पत्र और एजेंडा शीट का इस्तेमाल बचाव के तौर पर किया जा रहा है, जबकि वास्तव में उन्हें 3812.7036080 करोड़ रुपये की राशि में 195.9595 करोड़ रुपये शामिल करने पर आपत्ति जतानी चाहिए थी, क्योंकि राज्य सरकार की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं आई थी और उन्होंने सीएजी के समक्ष अपनी कार्रवाई का दृढ़ता से बचाव किया था। उन्होंने बिना किसी आपत्ति के रूपांतरण की प्रक्रिया को जारी रहने दिया, क्योंकि अब उनके लिए बचाव करना असुविधाजनक हो रहा था।

इससे पता चलता है कि वह हमेशा अपने गलत अभ्यावेदन के बारे में जानते थे और सुविधाजनक समय पर उन्होंने पूरी चीज को बीएसपीएचसीएल के पक्ष में इक्विटी में परिवर्तित करने की अनुमति दी और इससे यह भी पता चलता है कि याचिकाकर्ता को पता था कि पूरा लेन-देन बीएसपीएचसीएल और बीएसपीटीसीएल के बीच था और इसका राज्य सरकार से कोई लेना-देना नहीं था।

29. आरोप संख्या 4 के संबंध में, याचिकाकर्ता ने आरोप ज्ञापन प्राप्त होने के बाद प्रस्तुत अपने स्पष्टीकरण में और साथ ही दूसरे कारण बताओ नोटिस के विरुद्ध उत्तर में भी व्यावहारिक रूप से 195.9595 करोड़ रुपये को ऋण राशि के रूप में मानने पर लगातार जोर दिया। प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उक्त राशि को ऋण राशि के रूप में मानने का उनका रुख आयकर अधिकारियों के समक्ष उनके स्वयं के रुख के विपरीत था, जब उन्होंने पत्र संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 पर भरोसा करते हुए स्वीकार किया था कि 195.9595 करोड़ रुपये की उक्त राशि इक्विटी निवेश थी। उन्होंने 23 मई, 2018 के अपने एजेंडा नोट में निदेशक मंडल को भी गलत तरीके से प्रस्तुत किया। विभागीय जांच के दौरान और इस न्यायालय के समक्ष भी याचिकाकर्ता ने उक्त राशि को ऋण के रूप में दिखाना जारी रखा।

30. आरोप संख्या 5 बीएसपीटीसीएल को हुई आर्थिक हानि से संबंधित है।

31. आरोप संख्या 6 भी वित्तीय अनियमितताओं से संबंधित है, क्योंकि यह बीएसपीएचसीएल द्वारा बीएसपीटीसीएल को दी गई 144.59 करोड़ रुपये की राशि के उपचार से संबंधित है।

32. यह राशि 200.86 करोड़ रुपये की कुल राशि का हिस्सा थी, जिसे बीएसपीएचसीएल ने बीएसपीटीसीएल को हस्तांतरण के लिए राज्य योजना के तहत प्राप्त किया था ।

33. बीएसपीएचसीएल द्वारा बीएसपीटीसीएल को 11.03.2013 को 55.89 करोड़ रुपये की राशि हस्तांतरित की गई थी और शेष 144.59 करोड़ रुपये 06.09.2016 और 28.09.2016 को दो किस्तों में हस्तांतरित किए गए थे।

34. वर्ष 2013 में प्राप्त 55.89 करोड़ रुपये बीएसपीटीसीएल की पुस्तकों में "अंतर कंपनी हस्तांतरण" के रूप में दर्शाए गए थे, जबकि वर्ष 2016 में प्राप्त 144.59 करोड़ रुपये की राशि बीएसपीटीसीएल द्वारा 10.5% ब्याज की दर पर ऋण के रूप में खातों में दर्शाई गई थी, जिससे आयकर अधिनियम के तहत देयता और ट्रांसमिशन की लागत पर अतिरिक्त व्यय हुआ।

35. याचिकाकर्ता को हमेशा से पता था कि 144.59 करोड़ रुपए की राशि 'राज्य योजना' के तहत प्राप्त 200.89 करोड़ रुपए की राशि का हिस्सा थी, लेकिन उक्त राशि के हिस्से को दिए गए विभेदक उपचार के कारण आयकर की अतिरिक्त देयता उत्पन्न हो गई क्योंकि इसे आयकर अधिकारियों के समक्ष पुनः ऋण और पूंजीगत प्राप्ति के रूप में दिखाया गया था।

36. यह विभेदकारी व्यवहार जानबूझकर किया गया था क्योंकि उनके द्वारा व्यक्तिगत रूप से लिखे गए विभिन्न पत्रों के माध्यम से बार-बार आग्रह करने के बाद 144.59 करोड़ रुपये बीएसपीटीसीएल को हस्तांतरित कर दिए गए थे [इसे रनिंग पृष्ठ 217 (30.08.2016 पत्र), पृष्ठ 218 (04.02.2016) और पृष्ठ 220 (10.09.2013) में देखा जा सकता है] - 200.86 रुपये की शेष राशि जारी करने के लिए। इस प्रकार उन्हें हमेशा पता था कि 144.59 करोड़ रुपये "राज्य योजना" के तहत उसी 200.86 करोड़ रुपये का हिस्सा थे और इस प्रकार 55.89 करोड़

रुपये को 'अंतर कंपनी हस्तांतरण' और 144.59 करोड़ रुपये को 10.50% पर ऋण के रूप में दिखाकर विभेदकारी व्यवहार करने का कोई कारण नहीं था।

37. उक्त राशि पर अर्जित ब्याज को राजस्व प्राप्ति के रूप में दर्शाने तथा उसे लाभ-हानि खाते में दर्शाने में विफलता के कारण ब्याज देयता उत्पन्न हुई, जिसे कंपनी को आयकर प्राधिकारियों को वापस करना पड़ा।

38. उपर्युक्त पृष्ठभूमि के अंतर्गत, प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया कि प्राधिकारी ने पाया कि याचिकाकर्ता को ऐसा पद नहीं सौंपा जा सकता, जिसमें उसे सार्वजनिक धन की देखभाल करने में आपत्ति हो और वह महाप्रबंधक (वित्त) के पद के लिए उपयुक्त नहीं था, इसलिए उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया।

39. श्री मृगांक मौली के अनुसार, कोई भी जानबूझकर किया गया आचरण जिससे वित्तीय हानि और सार्वजनिक धन की हानि होती है, कदाचार कहलाता है। अपने तर्क के समर्थन में विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य बनाम रमेश चंद्र मांगलिक (2002) 3 एससीसी 443** में दिए गए निर्णय का हवाला दिया, जिसमें यह माना गया है कि प्रशासनिक क्षमता के उच्चतम मानक को प्राप्त करने में चूक या अकुशलता की कमी या विफलता का कार्य अपने आप में कदाचार नहीं हो सकता है। विकासशील स्थिति का मूल्यांकन करने में निर्णय की त्रुटि कर्तव्य निर्वहन में लापरवाही हो सकती है, लेकिन कदाचार नहीं होगी। हालांकि, यदि यह पाया जाता है कि आरोपों की प्रकृति अलग है, जिसे याचिकाकर्ता की ओर से मात्र चूक नहीं कहा जा सकता है या इसे योग्यता की कमी या अयोग्यता आदि के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, तो ऐसी वित्तीय अनियमितताओं को योग्यता की कमी या अयोग्यता के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। इस मामले में, न केवल योग्यता की कमी या अयोग्यता, बल्कि याचिकाकर्ता द्वारा आयकर अधिकारियों और नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के समक्ष जानबूझकर गलत बयानी करना भी कदाचार माना जाना चाहिए, जिसके लिए याचिकाकर्ता को दंडित किया जाना चाहिए।

40. इसी मुद्दे पर, उन्होंने **मिहिर कुमार हजारा चौधरी बनाम जीवन बीमा निगम एवं अन्य** के मामले का हवाला दिया, जिसकी रिपोर्ट **(2017) 9 एससीसी 404** में दी गई है।

उक्त रिपोर्ट के पैराग्राफ 23 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि एक कर्मचारी को अपने कर्तव्यों के निर्वहन में उच्च स्तर की ईमानदारी और सत्यनिष्ठा का पालन करना आवश्यक है। ऐसे मामले में जहां वह जमाकर्ताओं और ग्राहकों के पैसे का लेन-देन करता है, उसके लिए अपने कर्तव्यों में अधिक सतर्क रहना और भी आवश्यक है क्योंकि वह अपने नियोक्ता के लिए और उसकी ओर से पैसे का लेन-देन करता है। हालांकि, ऐसे कर्मचारी/अधिकारी को अपने नियोक्ता के हितों की रक्षा के लिए हर संभव कदम उठाने की आवश्यकता होती है। इसलिए, उसे अपने कर्तव्यों का निर्वहन पूरी निष्ठा, ईमानदारी, समर्पण और परिश्रम के साथ करना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वह ऐसा कुछ भी न करे, जो एक कर्मचारी/अधिकारी के लिए अनुचित हो। वास्तव में, अच्छा आचरण और अनुशासन किसी भी संस्था के प्रत्येक कर्मचारी/अधिकारी के कामकाज से अविभाज्य हैं और खासकर तब जब संस्था ग्राहकों के पैसे से संबंधित हो। अपने कर्तव्यों के निर्वहन में किसी भी तरह की लापरवाही, चाहे वह लापरवाही से हो या जानबूझकर या लापरवाही से, ऐसे कर्मचारी/अधिकारी की ओर से कदाचार माना जाता है। अनुच्छेद 27 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए प्रसन्नता व्यक्त की कि "जब अधिकारी/कर्मचारी बिना अधिकार के काम करता हुआ पाया जाता है, तो अपराधी के पास यह कहने के लिए कोई बचाव उपलब्ध नहीं है कि मामले में कोई हानि या लाभ नहीं हुआ। किसी संगठन और विशेष रूप से वित्तीय संस्थान का अनुशासन, जहां कई जमाकर्ताओं का पैसा उनके लाभ के लिए जमा किया जाता है, उसके प्रत्येक कर्मचारी पर निर्भर करता है, जो ऐसी जमा राशि के संरक्षक के रूप में आवंटित क्षेत्र में कार्य/संचालन करता है। अपने अधिकार से परे काम करना अपने आप में अनुशासन का उल्लंघन है और इस प्रकार यह कदाचार है, जिसके कारण अपराधी को प्रतिकूल आदेशों का सामना करना पड़ता है।"

41. प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने इसके बाद **सुरेश पथरेला बनाम ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स** का हवाला दिया, जिसकी रिपोर्ट (2006) 10 एससीसी 572 में दी गई है। पैराग्राफ 19, 20 और 21 हमारे उद्देश्य के लिए महत्वपूर्ण हैं और नीचे उद्धृत हैं:-

"19. अनुशासनात्मक प्राधिकारी-सह-क्षेत्रीय प्रबंधक बनाम निकुंज बिहारी पटनायक [(1996) 9 एससीसी 69: 1996 एससीसी (एल एंड एस) 1194] में

इस न्यायालय ने माना कि बैंक अधिकारी द्वारा अपने अधिकार से परे कार्य करना कदाचार है और नुकसान का कोई और सबूत आवश्यक नहीं है।

20. क्षेत्रीय प्रबंधक, यू.पी. एसआरटीसी बनाम होती लाल [(2003) 3 एससीसी 605: 2003 एससीसी (एल एंड एस) 363] में इस न्यायालय ने एससीसी पृष्ठ 10 में माना। धारा 614 में कहा गया है: "यदि आरोपित कर्मचारी किसी ऐसे पद पर है, जहां ईमानदारी और सत्यनिष्ठा कार्य करने की अनिवार्य शर्त है, तो इस मामले में नरमी से पेश आना उचित नहीं होगा। ऐसे मामलों में दुराचार से सख्ती से निपटा जाना चाहिए। जहां व्यक्ति सार्वजनिक धन का लेन-देन करता है या वित्तीय लेन-देन में लगा हुआ है या प्रत्ययी हैसियत से काम करता है, वहां उच्चतम स्तर की सत्यनिष्ठा और विश्वसनीयता अनिवार्य है और अपवाद रहित है। इस पृष्ठभूमि में, उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निष्कर्ष उचित नहीं लगते। हम इसे खारिज करते हैं और बर्खास्तगी के आदेश को बरकरार रखने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को बहाल करते हैं।"

21. चेयरमैन और एमडी, यूनाइटेड कमर्शियल बैंक बनाम पी.सी. कक्कड़ [(2003) 4 एससीसी 364: 2003 एससीसी (एलएंडएस) 468] में, इस न्यायालय ने एससीसी पृष्ठ 376-77 के पैरा 14 में निम्नानुसार कहा:

"14. बैंक अधिकारी को ईमानदारी और सत्यनिष्ठा के उच्च मानकों का पालन करना आवश्यक है। वह जमाकर्ताओं और ग्राहकों के पैसे से संबंधित है। बैंक के प्रत्येक अधिकारी/कर्मचारी को बैंक के हितों की रक्षा के लिए सभी संभव कदम उठाने और अपने कर्तव्यों का निर्वहन पूरी निष्ठा, ईमानदारी, समर्पण और लगन से करने और ऐसा कुछ भी नहीं करने की आवश्यकता है जो बैंक अधिकारी के लिए अनुचित हो। अच्छा आचरण और अनुशासन बैंक के प्रत्येक अधिकारी/कर्मचारी के कामकाज से अविभाज्य हैं। जैसा कि इस न्यायालय ने अनुशासनात्मक प्राधिकारी-सह-क्षेत्रीय प्रबंधक बनाम निकुंज बिहारी पटनायक [(1996) 9 एससीसी 69: 1996 एससीसी (एलएंडएस) 1194] में देखा था, यह कहना कोई बचाव नहीं है कि अधिकारी/कर्मचारी द्वारा बिना अधिकार के काम

करने पर कोई हानि या लाभ नहीं हुआ। किसी संगठन का अनुशासन, खास तौर पर बैंक का अनुशासन, अनुशासन पर निर्भर करता है। अपने प्रत्येक अधिकारी और अपने आवंटित क्षेत्र में काम करने वाले अधिकारियों पर। अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर काम करना अपने आप में अनुशासन का उल्लंघन है और यह एक कदाचार है। कर्मचारी के खिलाफ लगाए गए आरोप आकस्मिक प्रकृति के नहीं थे और गंभीर थे। ऐसा प्रतीत होता है कि इन पहलुओं को उच्च न्यायालय द्वारा ध्यान में नहीं रखा गया।”

42. प्रतिवादियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि जांच की प्रक्रिया के दौरान या अनुशासनात्मक प्राधिकरण के समक्ष, उन्होंने किसी भी प्रक्रियात्मक उल्लंघन के बारे में कोई आरोप नहीं लगाया, जिससे उनके प्रति पूर्वाग्रह पैदा हुआ हो। याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को कोई भी दस्तावेज पेश नहीं किया गया और दस्तावेज को साबित करने के लिए विशेष रूप से पत्र संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 को अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करके साबित नहीं किया गया। रिट याचिका में दिए गए कथनों से यह पता चलता है कि याचिकाकर्ता के बचाव का मुख्य आधार पत्र संख्या 2175, दिनांक 30 जून, 2014 था। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 की धारा 53 के मद्देनजर, किसी भी कार्यवाही में कोई तथ्य साबित करने की आवश्यकता नहीं है, जिसे पक्षकारों या उनके परिचारकों ने सुनवाई में स्वीकार करने पर सहमति व्यक्त की हो। दूसरे शब्दों में, एक स्वीकृत दस्तावेज को साबित करने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का यह तर्क कि अनुशासनात्मक कार्यवाही किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं थी, का कोई आधार नहीं है। अपने तर्क के समर्थन में, वह स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एंड ऑर्स बनाम नरेंद्र कुमार पांडे के मामले का हवाला देते हैं, जिसकी रिपोर्ट (2013) 2 एससीसी 740 में दी गई है। इस निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि यदि आरोप सामान्य व्यवसायिक प्रक्रिया में रखे गए दस्तावेजों से सिद्ध होते हैं, तो उन आरोपों को साबित करने के लिए कोई मौखिक साक्ष्य आवश्यक नहीं है।

43. उन्होंने भारत संघ एवं अन्य बनाम दिलीप पॉल के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय पर भी भरोसा किया है, जिसकी रिपोर्ट 2023 एससीसी

ऑनलाइन एससी 1423 में दी गई है और प्रस्तुत किया है कि यदि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है, तो याचिकाकर्ता को जांच अधिकारी के साथ-साथ अनुशासनात्मक प्राधिकरण के समक्ष अपना मामला रखने का कोई अवसर नहीं दिया गया, इससे उसके प्रति पूर्वाग्रह हो सकता है, लेकिन मौलिक प्रकृति के अलावा अन्य प्रक्रियात्मक प्रावधान के संबंध में, पर्याप्त अनुपालन का सिद्धांत उपलब्ध होगा और ऐसे मामलों में, स्कोर पर आपत्तियों को पूर्वाग्रह की कसौटी पर कसा जाना चाहिए। प्रतिवादियों के विद्वान वरिष्ठ वकील के अनुसार, याचिकाकर्ता विभागीय जांच के दौरान पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं था। इसलिए, यह मानने का कोई कारण नहीं है कि याचिकाकर्ता दस्तावेजों की आपूर्ति न करने के कारण पूर्वाग्रह से ग्रस्त था।

44. प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे दलील दी कि याचिकाकर्ता ने निदेशक मंडल के समक्ष वैधानिक अपील दायर न करके बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 2005 में निर्धारित वैधानिक प्रावधानों का पालन नहीं किया। उनका तर्क है कि निदेशक मंडल अपीलीय प्राधिकारी है न कि सीएमडी। अपील निदेशक मंडल के समक्ष दायर की जानी चाहिए थी। याचिकाकर्ता की ओर से दलील दी गई कि इस आधार पर वैधानिक अपील दायर करने से कोई सार्थक उद्देश्य पूरा नहीं होगा कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश सीएमडी द्वारा अनुमोदन के आधार पर था।

मेरा निष्कर्ष

45. (ए) स्थिरता पर: - याचिकाकर्ता ने मुद्दा उठाया है कि निर्विवाद रूप से उन्हें तत्कालीन बीएसईबी द्वारा नियुक्त किया गया था। विभागीय कार्यवाही शुरू होने की तिथि पर, बीएसपीएचसीएल नियुक्ति प्राधिकारी था और इसलिए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी था। याचिकाकर्ता को होल्डिंग कंपनी के तहत सहायक कंपनियों के पुनर्गठन / पुनर्गठन के बाद बीएसपीटीसीएल में तैनात किया गया था। हालांकि, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि बीएसपीएचसीएल याचिकाकर्ता का अनुशासनात्मक प्राधिकारी है। उक्त तथ्य को स्थापित करने के लिए, याचिकाकर्ता ने अधिसूचना संख्या 17, दिनांक 30 अक्टूबर, 2012 (अनुलग्नक-2) को रिकॉर्ड में लाया, जिसके द्वारा, बीएसईबी की स्थानांतरण योजना प्रकाशित की गई थी। योजना के खंड 6.2 में कहा गया है कि बोर्ड के कार्मिक, यानी वितरण, सामान्य, ट्रांसमिशन और सामान्य सेवाओं में शामिल लोग होल्डिंग कंपनी में स्थानांतरित हो जाएंगे। खंड 6.3 में

कहा गया है कि उप-खंड 6.2 के अधीन, कार्मिक होल्डिंग कंपनी से आगे स्थानांतरित माने जाएंगे, जिसमें ट्रांसमिशन, उत्पादन और वितरण कार्य और गतिविधियों के साथ काम करने वाले सभी कार्मिक शामिल हैं। हालांकि याचिकाकर्ता को महाप्रबंधक, वित्त और लेखा के रूप में तैनात किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता की सेवा की प्रकृति सामान्य सेवाओं के अंतर्गत आती है। इसलिए, बीएसपीटीसीएल में याचिकाकर्ता द्वारा दी गई सेवा प्रतिनियुक्ति या ग्रहणाधिकार पर हो सकती है, लेकिन नियुक्ति प्राधिकारी हमेशा बीएसपीएफसीएल था। योजना की अनुसूची-एफ की प्रविष्टि 2, भाग-II सामान्य सेवाओं को संदर्भित करती है जिसमें लेखा और वित्त शामिल हैं। यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता होल्डिंग कंपनी के अधीन बना हुआ है। याचिकाकर्ता के स्थानांतरण आदेश (अनुलग्नक-3) बीएसपीएफसीएल द्वारा पारित किए गए थे। इसलिए, बर्खास्तगी के आदेश को सीएमडी, बीएसपीएफसीएल द्वारा अनुमोदित किया गया था, हालांकि प्रासंगिक समय पर याचिकाकर्ता बीएसपीएफसीएल में तैनात था। इसलिए, याचिकाकर्ता के अनुसार, बीएसपीटीसीएल के महाप्रबंधक (एचआर/प्रशासन) द्वारा आरोप-पत्र प्रस्तुत करके विभागीय कार्यवाही शुरू करना कानून गलत और अमान्य है।

46. जबकि याचिकाकर्ता ने अनुशासनात्मक कार्यवाही की स्थिरता को चुनौती दी, प्रतिवादी ने याचिकाकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका की स्थिरता को चुनौती दी। प्रतिवादियों की ओर से यह आरोप लगाया गया है कि याचिकाकर्ता ने निदेशक मंडल के समक्ष अपील के प्रभावी उपाय का लाभ उठाए बिना तत्काल रिट याचिका दायर की। बर्खास्तगी आदेश के खिलाफ, निदेशक मंडल के समक्ष अपील का उपाय है, फिर भी याचिकाकर्ता ने कोई अपील दायर नहीं की और सीधे भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस माननीय न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। रिट याचिका स्थिरता योग्य नहीं है और केवल इसी आधार पर इसे खारिज किया जाना चाहिए।

47. यह सही है कि विभागीय कार्यवाही बीएसपीएचसीएल द्वारा शुरू नहीं की गई थी, यह महाप्रबंधक (मानव संसाधन/प्रशासन), बीएसपीटीसीएल द्वारा प्रस्तुत प्रभार ज्ञापन के आधार पर शुरू की गई थी।

48. रक्षा मंत्रालय बनाम प्रभाष चंद्र मिर्धा (2012) 11 एससीसी 565 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के प्रावधानों की व्याख्या करते हुए

कानूनी प्रस्ताव रखा है कि कदाचार के आरोप में किसी अधिकारी को हटाने और बर्खास्त करने का काम नियुक्ति प्राधिकारी से नीचे के प्राधिकारी द्वारा नहीं किया जाना चाहिए। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि नियुक्ति प्राधिकारी से नीचे के प्राधिकारी द्वारा अपराधी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती है।

49. यदि नियुक्ति प्राधिकारी अपीलीय प्राधिकारी नहीं है तो नियुक्ति प्राधिकारी से उच्चतर प्राधिकारी को कार्यवाही आरंभ करने और दण्ड लगाने की अनुमति है, ताकि अपराधी अपील का अधिकार न खो दे। अन्य मामले में अपराधी को यह साबित करना होगा कि उसके साथ क्या पक्षपात हुआ है।

50. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **पुलिस महानिरीक्षक बनाम थवसियाप्पन** के मामले में (1996) 2 एससीसी 145 में रिपोर्ट की गई इस मुद्दे पर अपने पहले के फैसले पर पुनर्विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि कानून में ऐसा कुछ भी नहीं है जो नियुक्ति प्राधिकारी के अधीनस्थ प्राधिकारी को अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने या आरोप जापन जारी करने से रोकता हो और यह निश्चित रूप से आवश्यक नहीं है कि आरोप उस प्राधिकारी द्वारा तय किए जाएं जो दंड देने में सक्षम हो या जांच ऐसे प्राधिकारी द्वारा की जानी चाहिए।

51. इस निर्णय पर आते समय, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम डॉ. आर.के. दिवाकर एवं अन्य**, (1997) 11 एससीसी 17 में रिपोर्ट किए गए तथा **स्टेट ऑफ यू.पी. एवं अन्य बनाम चंद्रपाल सिंह एवं अन्य**, (2003) 4 एससीसी 670 में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर विचार किया।

52. इस तरह के उदाहरण को देखते हुए, मैं यह मानने की स्थिति में नहीं हूं कि अनुशासनात्मक कार्यवाही कानून की दृष्टि से गलत है और शुरू से ही शून्य है, क्योंकि यह नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा शुरू की गई थी।

53. साथ ही, अभिलेख से यह पाया गया है कि दंड का आदेश सीएमडी, बीएसएचपीसीएल की मंजूरी से पारित किया गया था। इसलिए, अनुशासनात्मक कार्यवाही और दंड में कोई प्रक्रियात्मक त्रुटि नहीं है।

54. अब मैं प्रतिवादियों द्वारा रिट याचिका की स्वीकार्यता के आधार पर उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति पर आता हूं, क्योंकि यह वैधानिक अपील का सहारा लिए बिना अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश के विरुद्ध दायर की गई है।

55. गोदरेज सारा ली लिमिटेड बनाम आबकारी एवं कराधान अधिकारी, एआईआर 2023 एससी 781 के मामले में हाल ही में दिए गए फैसले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस मुद्दे पर फैसला सुनाया कि क्या रिट याचिका को केवल इसलिए "अस्वीकार्य" मानकर खारिज कर दिया जाना चाहिए क्योंकि संबंधित कानूनों द्वारा प्रदान किए गए वैकल्पिक उपाय को रिट क्षेत्राधिकार का आह्वान करने के इच्छुक पक्षों द्वारा नहीं अपनाया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसे इस प्रकार माना है:

"4. प्रश्नों का उत्तर देने से पहले, हम संविधान के अनुच्छेद 226 द्वारा प्रदत्त रिट शक्तियों के प्रयोग पर कुछ शब्द कहने की इच्छा महसूस करते हैं, क्योंकि उच्च न्यायालयों द्वारा पारित कुछ आदेशों में रिट याचिकाओं को केवल इसलिए "अनुरक्षणीय नहीं" माना गया है क्योंकि संबंधित कानूनों द्वारा प्रदान किए गए वैकल्पिक उपाय को रिट अधिकारिता का आह्वान करने के इच्छुक पक्षों द्वारा नहीं अपनाया गया है। अनुच्छेद 226 के तहत विशेषाधिकार रिट जारी करने की शक्ति प्रकृति में पूर्ण है। ऐसी शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा संविधान में ही देखी जा सकती है। इस संबंध में अनुच्छेद 329 और संविधान में इसी तरह के शब्दों वाले अन्य अनुच्छेदों के अध्यादेशों का संदर्भ लेना लाभदायक हो सकता है। अनुच्छेद 226, रिट जारी करने की शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा या प्रतिबंध नहीं लगाता है। हालांकि यह सच है कि उसी कानून के तहत उपाय उपलब्ध होने के बावजूद रिट शक्तियों का प्रयोग रिट याचिका में आरोपित कार्रवाई को नियमित तरीके से नहीं बनाया जाना चाहिए, फिर भी, केवल यह तथ्य कि याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय के समक्ष किसी मामले में अपने लिए उपलब्ध वैकल्पिक उपाय का अनुसरण नहीं किया है/इसे यांत्रिक रूप से इसे खारिज करने का आधार नहीं माना जा सकता है। यह स्वयंसिद्ध है कि उच्च न्यायालयों के पास (प्रत्येक विशेष मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए) यह विवेक है कि वे रिट याचिका पर

विचार करें या नहीं। अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति के प्रयोग पर स्व-लगाए गए प्रतिबंधों में से एक जो न्यायिक मिसालों के माध्यम से विकसित हुआ है, वह यह है कि उच्च न्यायालयों को आम तौर पर रिट याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए, जहां एक प्रभावी और प्रभावकारी वैकल्पिक उपाय उपलब्ध है। साथ ही, यह भी याद रखना चाहिए कि अपील या पुनरीक्षण के वैकल्पिक उपाय की उपलब्धता मात्र से, जिसे अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करने वाले पक्ष ने नहीं अपनाया है, उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को समाप्त नहीं कर देगा और रिट याचिका को "अनुरक्षणीय नहीं" बना देगा। निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में, इस न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि वैकल्पिक उपाय की उपलब्धता रिट याचिका की "अनुरक्षणीयता" पर पूर्ण प्रतिबंध के रूप में कार्य नहीं करती है और यह नियम, जिसके तहत पक्ष को किसी कानून द्वारा प्रदान किए गए वैकल्पिक उपाय को अपनाने की आवश्यकता होती है, कानून के नियम के बजाय नीति, सुविधा और विवेक का नियम है। हालांकि यह प्राथमिक है, लेकिन यह फिर से कहा जाना चाहिए कि रिट याचिका की "अनुरक्षणीयता" और "अनुरक्षणीयता" अलग-अलग अवधारणाएँ हैं। दोनों के बीच बारीक लेकिन वास्तविक अंतर को नज़रअंदाज़ नहीं किया जाना चाहिए। "अनुरक्षणीयता" के बारे में आपत्ति मामले की जड़ तक जाती है और यदि ऐसी आपत्ति सारवान पाई जाती है, तो न्यायालय निर्णय के लिए लिस प्राप्त करने में भी असमर्थ हो जाएंगे। दूसरी ओर, "अनुरक्षणीयता" का प्रश्न पूरी तरह से उच्च न्यायालयों के विवेक के दायरे में है, रिट उपाय विवेकाधीन है। एक रिट याचिका अनुरक्षणीय होने के बावजूद कई कारणों से उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं की जा सकती है या याचिकाकर्ता को राहत देने से भी इनकार किया जा सकता है, भले ही एक ठोस कानूनी बिंदु स्थापित हो, यदि दावा की गई राहत प्रदान करने से जनहित को बढ़ावा नहीं मिलता है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर रिट याचिका को खारिज करना कि याचिकाकर्ता ने वैकल्पिक उपाय का लाभ नहीं उठाया है, हालांकि, इस बात की जांच किए बिना कि क्या इस तरह के मनोरंजन के लिए एक असाधारण मामला बनाया गया है, उचित नहीं होगा।

5. संविधान के उदय के कुछ समय बाद, इस न्यायालय की संविधान पीठ ने [1958] एससीआर 595 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मोहम्मद नूह) में दिए गए अपने निर्णय में निम्नलिखित टिप्पणी की थी:

"10. इसके बाद यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्रमाण पत्र के संबंध में कोई नियम नहीं है, जैसा कि परमादेश के संबंध में है, कि यह केवल तभी लागू होगा जब कोई अन्य समान रूप से प्रभावी उपाय न हो। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि, बशर्ते कि अपेक्षित आधार मौजूद हों, प्रमाण पत्र लागू होगा, भले ही अपील का अधिकार कानून द्वारा प्रदान किया गया हो, (हेल्सबरी के इंग्लैंड के कानून, तीसरा संस्करण, खंड 11, पृष्ठ 130 और वहाँ उद्धृत मामले)। तथ्य यह है कि पीड़ित पक्ष के पास एक और पर्याप्त उपाय है, इस निष्कर्ष पर पहुँचने में उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है कि क्या उसे अपने विवेक का प्रयोग करते हुए अपने अधीनस्थ अवर न्यायालयों की कार्यवाही और निर्णयों को रद्द करने के लिए प्रमाण पत्र जारी करना चाहिए और आमतौर पर उच्च न्यायालय तब तक हस्तक्षेप करने से इनकार कर देगा जब तक कि पीड़ित पक्ष अपने अन्य वैधानिक उपायों को समाप्त नहीं कर लेता, यदि कोई भी। लेकिन यह नियम जिसके तहत रिट दिए जाने से पहले वैधानिक उपचारों को समाप्त करने की आवश्यकता है, वह कानून के नियम के बजाय नीति, सुविधा और विवेक का नियम है और ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ इस तथ्य के बावजूद कि पीड़ित पक्ष के पास अन्य पर्याप्त कानूनी उपचार थे, सर्विओरी रिट जारी की गई है।

6. पिछली सदी के अंत में, इस न्यायालय ने (1998) 8 एससीसी 1 (वर्ल्डपूल कॉर्पोरेशन बनाम रजिस्ट्रार ऑफ ट्रेड मार्क्स, मुंबई) में दिए गए अपने निर्णय के पैराग्राफ 15 में अपवादों को रेखांकित किया था, जिसके अस्तित्व पर रिट न्यायालय को रिट याचिका पर विचार करने का अधिकार होगा, भले ही उसके पास आने वाले पक्ष ने कानून द्वारा प्रदान किए गए वैकल्पिक उपाय का लाभ न उठाया हो। यह इस प्रकार है:

(i) जहां रिट याचिका में किसी मौलिक अधिकार के प्रवर्तन की मांग की गई हो;

(ii) जहां प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हो;

(iii) जहां आदेश या कार्यवाही पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर हो; या

(iv) जहां किसी अधिनियम की वैधता को चुनौती दी गई हो।

7. बहुत समय पहले नहीं, इस न्यायालय ने [2021] एससीसी ऑनलाइन एससी 884 (सहायक राज्य कर आयुक्त बनाम कमर्शियल स्टील लिमिटेड)* में दिए गए अपने निर्णय में पैराग्राफ 11 में उन्हीं सिद्धांतों को दोहराया है।

8. इसके अलावा, हम इस न्यायालय के निर्णयों का भी संदर्भ ले सकते हैं, जो (1977) 2 एससीसी 724 (यू.पी. राज्य बनाम इंडियन ह्यूम पाइप कंपनी लिमिटेड)** और (2000) 10 एससीसी 482 (भारत संघ बनाम हरियाणा राज्य) में रिपोर्ट किए गए हैं। पूर्व निर्णय को सरलता से पढ़ने पर यह प्रतीत होता है कि क्या कोई निश्चित वस्तु बिक्री कर कानून में किसी प्रविष्टि के अंतर्गत आती है, यह एक विशुद्ध कानूनी प्रश्न उठाता है और यदि तथ्यों की जांच अनावश्यक है, तो उच्च न्यायालय अपने विवेक से रिट याचिका पर विचार कर सकता है, भले ही वैकल्पिक उपाय का लाभ न उठाया गया हो; और जब तक विवेक का प्रयोग अनुचित या गलत साबित न हो जाए, यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा। बाद के निर्णय में, इस न्यायालय ने अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए मुद्दे को पूरी तरह से कानूनी पाया, जिसके लिए अपीलकर्ता को पदानुक्रम में वैधानिक अपीलों के चक्रव्यूह में डाले बिना उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारण की आवश्यकता थी। उक्त निर्णयों से यह निष्कर्ष निकलता है कि जहां विवाद पूरी तरह से कानूनी है और इसमें तथ्य के विवादित प्रश्न शामिल नहीं हैं, बल्कि केवल कानून के प्रश्न हैं, तो

वैकल्पिक उपाय उपलब्ध होने के आधार पर रिट याचिका को खारिज करने के बजाय उच्च न्यायालय द्वारा इसका निर्णय किया जाना चाहिए।

56. इसके अलावा, हम इस न्यायालय के (1977) 2 एससीसी 724 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम इंडियन ब्लूम पाइप कंपनी लिमिटेड) और (2000) 10 एससीसी 482 (भारत संघ बनाम हरियाणा राज्य) में दिए गए निर्णयों का भी उपयोगी रूप से उल्लेख कर सकते हैं। पूर्व निर्णय को सरलता से पढ़ने पर यह प्रतीत होता है कि क्या कोई वस्तु बिक्री कर कानून में किसी प्रविष्टि के अंतर्गत आती है, यह एक विशुद्ध कानूनी प्रश्न उठाता है और यदि तथ्यों की जांच अनावश्यक है, तो उच्च न्यायालय अपने विवेक से रिट याचिका पर विचार कर सकता है, भले ही वैकल्पिक उपाय का लाभ न उठाया गया हो; और जब तक विवेक का प्रयोग अनुचित या गलत साबित न हो जाए, यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा। बाद के निर्णय में, इस न्यायालय ने अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए मुद्दे को पूरी तरह से कानूनी पाया, जिसके लिए अपीलकर्ता को पदानुक्रम में वैधानिक अपीलों के चक्रव्यूह में डाले बिना उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारण की आवश्यकता थी। उक्त निर्णयों से यह निष्कर्ष निकलता है कि जहां विवाद पूरी तरह से कानूनी है और इसमें तथ्य के विवादित प्रश्न शामिल नहीं हैं, बल्कि केवल कानून के प्रश्न हैं, तो वैकल्पिक उपाय उपलब्ध होने के आधार पर रिट याचिका को खारिज करने के बजाय उच्च न्यायालय द्वारा इसका निर्णय किया जाना चाहिए।

57. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गिरि के निवेदन की जांच करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय पाता है कि जब दंड का आदेश होल्डिंग कंपनी के सर्वोच्च प्राधिकारी के अनुमोदन से पारित किया गया था, तो अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दायर करने से कोई सार्थक उद्देश्य पूरा नहीं होता।

58. इस संबंध में भी, यह न्यायालय पाता है कि तत्काल रिट याचिका स्वीकार्य है।

59. (ख) **मेन्स रीआ-** माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भारत संघ एवं अन्य बनाम जे. अहमद के मामले में (1979) 2 एससीसी 286** में रिपोर्ट की गई “कदाचार” शब्द के तरीके, दायरे और उद्देश्य को स्पष्ट किया।

60. निर्णय के पैराग्राफ 11 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्ट्राउड के न्यायिक शब्दकोष में कदाचार के बचाव को नोट किया है जो इस प्रकार है:

“कदाचार का अर्थ है, गलत इरादे से किया गया कदाचार; लापरवाही, निर्णय की त्रुटियाँ या मासूम गलती के कार्य, ऐसे कदाचार नहीं बनते।”

61. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि औद्योगिक न्यायशास्त्र में अन्य बातों के अलावा आदतन या घोर लापरवाही कदाचार की श्रेणी में आती है लेकिन **उत्कल मशीनरी लिमिटेड बनाम वर्कमैन, मिस शांति पटनायक [एआईआर 1966 एससी 1051]** में कर्मचारी के उपक्रम को नियंत्रित करने वाले स्थायी आदेशों की अनुपस्थिति में असंतोषजनक कार्य को कदाचार के रूप में माना गया था और इसे दंडात्मक कार्रवाई के रूप में खारिज किया गया था। **एस गोविंदा मेनन बनाम भारत संघ [(1967) 2 एससीआर 566]** में जिस तरह से सेवा के एक सदस्य ने सत्ता का दुरुपयोग करते हुए अपने अर्ध-न्यायिक कार्य का निर्वहन किया उसे अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने के लिए कदाचार माना गया था। एक भी चूक या निर्णय की त्रुटि सामान्यतः कदाचार नहीं मानी जाएगी, हालांकि यदि ऐसी गलती या चूक के परिणामस्वरूप गंभीर या भयावह परिणाम होते हैं, तो उसे कदाचार माना जाएगा, जैसा कि इस न्यायालय ने **पी.एच.कल्याणी बनाम एयर फ्रांस, कलकत्ता [एआईआर 1963 एससी 1756]** में माना था, जिसमें पाया गया था कि लोडिंग-शीट और बैलेंस चार्ट की जांच करते समय कर्मचारी द्वारा की गई दो गलतियों से विमान में संभावित दुर्घटना और मानव जीवन की संभावित हानि हो सकती थी, और इसलिए, गंभीर परिणामों के संदर्भ में काम में लापरवाही को कदाचार माना गया। हालाँकि, यह मानना मुश्किल है कि सार्वजनिक कार्यालय से जुड़े कर्तव्य के निर्वहन में दक्षता की कमी या उच्चतम मानकों को प्राप्त करना *स्वतः* ही कदाचार माना जाएगा। कर्तव्य के निष्पादन में लापरवाही हो सकती है और कर्तव्य के निष्पादन में चूक या विकासशील स्थिति का मूल्यांकन करने में निर्णय की त्रुटि कर्तव्य के निर्वहन में लापरवाही हो सकती है, लेकिन तब तक कदाचार नहीं माना जाएगा जब तक कि लापरवाही के लिए सीधे तौर पर जिम्मेदार

परिणाम ऐसे न हों कि उन्हें ठीक न किया जा सके या परिणामी क्षति इतनी भारी न हो कि दोष की डिग्री बहुत अधिक हो। एक गलती लापरवाही का संकेत हो सकती है और दोषी होने की डिग्री लापरवाही की गंभीरता को इंगित कर सकती है। लापरवाही अक्सर जानबूझकर की गई दुष्टता या द्वेष की तुलना में अधिक नुकसान पहुंचा सकती है। एक ऐसे संतरी के क्लासिक उदाहरण को छोड़कर जो अपनी पोस्ट पर सोता है और दुश्मन को निकल जाने देता है, ऐसे अन्य अधिक परिचित उदाहरण हैं जिनमें एक रेलवे केबिनमैन एक ट्रेन में सिग्नल देता है जो उसी ट्रैक पर है जहां एक स्थिर ट्रेन है जिससे आमने-सामने टक्कर होती है; एक नर्स अंतःशिरा इंजेक्शन देती है जिसे अंतःपेशीय रूप से दिया जाना चाहिए जिससे तत्काल मृत्यु हो जाती है; एक पायलट इंजन में गड़बड़ी दिखाने वाले उपकरण को अनदेखा कर देता है और विमान दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है जिससे भारी जानमाल का नुकसान होता है। गलत सहानुभूति एक बड़ी बुराई हो सकती है। लेकिन किसी भी मामले में, कर्तव्य के निष्पादन में दक्षता के उच्चतम मानक को प्राप्त करने में विफलता लापरवाही का अनुमान लगाने की अनुमति देती है और न ही आचरण नियमों के नियम 3 के उद्देश्य के लिए कदाचार माना जाएगा क्योंकि यह कर्तव्य के प्रति समर्पण की कमी को दर्शाता है।

62. कोई कर्मचारी औसत दर्जे का हो सकता है। प्राधिकारी द्वारा दिए गए किसी विशेष निर्देश को समझने में विफल रहने के कारण वह अपने नियोक्ता या प्राधिकारी के हित के विरुद्ध निर्णय ले सकता है। विफलता के ऐसे मामलों में, किसी कर्मचारी को कदाचार का कार्य करने वाला नहीं कहा जा सकता।

63. **जे. अहमद (सुप्रा)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का सार यह है:-

(i) कार्यकुशलता की कमी और उच्च पद पर रहते हुए प्रशासनिक योग्यता के उच्चतम मानक को प्राप्त करने में विफलता अपने आप में कदाचार नहीं है। इसमें चूक और कमीशन के विशिष्ट कार्य होने चाहिए;

(ii) कर्तव्य के निर्वहन में लापरवाही जहां परिणाम अपूरणीय हैं या जिसके परिणामस्वरूप भारी क्षति हुई है, कदाचार है;

(iii) कर्तव्य के निष्पादन में घोर आदतन लापरवाही में भले ही कोई मानसिक कारण शामिल न हो, लेकिन फिर भी यह कदाचार है।

64. इस प्रकार, कदाचार और मेन्स रीया एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं हैं, जबकि मेन्स रीया में दोषी इरादे और आपराधिक मानसिकता शामिल है, कदाचार में दोषी इरादे को साबित करना आवश्यक नहीं है। इसलिए, ऐसे मामलों में भी जहां आरोपित कर्मचारी पर वित्तीय अनियमितताओं के कारण गलत लाभ के लिए आरोप नहीं लगाया जाता है, वहां बार-बार और घोर लापरवाही और जानबूझकर किए गए कार्य के परिणामस्वरूप कदाचार हो सकता है, जिससे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम या उसकी सहायक कंपनियों को वित्तीय नुकसान हो सकता है।

65. इस मामले में, याचिकाकर्ता ने 195.9595 करोड़ रुपये को ऋण राशि के रूप में दिखाया और यह इक्विटी नहीं थी। आयकर अधिनियम के तहत, यह पहले ही कहा जा चुका है कि इक्विटी पूंजी को कंपनी की परिसंपत्तियों के विकास के लिए इस्तेमाल की जाने वाली पूंजी का प्रतिनिधित्व करने वाली पूंजी प्राप्ति के रूप में माना जाता है और इस तरह आयकर से छूट दी जाती है। हालांकि, ऋण राशि इक्विटी नहीं है और ऐसी राशि के लिए कंपनी को आयकर विभाग को कर का भुगतान करना पड़ा। उक्त राशि के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा अपनाए गए रुख के कारण, कंपनी को आयकर विभाग को 30.19 करोड़ रुपये की देनदारियां उठानी पड़ीं।

66. दिनांक 30 जून, 2014 के पत्र संख्या 2175 के अनुसार याचिकाकर्ता को हमेशा से पता था कि पुनर्गठन की तिथि अर्थात् 1 नवंबर, 2012 के बाद होल्डिंग कंपनी द्वारा सहायक कंपनियों को हस्तांतरित की गई राशि को इक्विटी पूंजी के रूप में माना जाना था, जो आयकर विभाग के समक्ष उनके बयान से स्पष्ट है और फिर भी उन्होंने सीएजी के समक्ष यह प्रस्तुत करना जारी रखा कि उक्त राशि इक्विटी नहीं थी, बल्कि राज्य सरकार द्वारा ऋण थी।

67. इस प्रकार, याचिकाकर्ता की ओर से किया गया विशिष्ट कार्य और चूक मात्र लापरवाही या पत्र संख्या 2175 दिनांक 30 जून, 2014 की गलत व्याख्या नहीं है। याचिकाकर्ता का कार्य जानबूझकर, जानबूझकर और कंपनी के हित के विरुद्ध था। इसलिए, ऐसी घोर लापरवाही कदाचार के बराबर है।

निष्कर्ष

68. उपरोक्त कारणों से, मुझे अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता।

69. वर्तमान रिट याचिका गुण-दोष के आधार पर खारिज किये जाने योग्य है।

70. तदनुसार, तत्काल रिट याचिका को खारिज किया जाता है।

71. तथापि, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(बिबेक चौधरी, न्यायमूर्ति)

एसकेएम/-उत्तम